भारतीय विद्या मन्दिर ग्रन्थमाला

६

नागदमण

भारतीय विद्या मदिर ग्रंथमाला

६



नागदमण

[डिंगळ कृष्ण-भक्ति-साहित्य का सुमधुर काव्य]

सम्पादक
मूलचन्द 'प्राणेश', साहित्यरत्न
शोधसहायक, भा० वि० म० शोध प्रतिष्ठान,
बीकानेर



भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान
बीकानेर [राजस्थान]

भारतीय विद्या मंदिर ग्रन्थमाला–६

● सम्पादक
श्री मूलचन्द 'प्राणेश', साहित्यरत्न

● आवरण शिल्पी
श्री आशाराम गोस्वामी

● प्रथम संस्करण भा० सं० १८८८, १९६६ ई०

● मूल्य ५.००

● प्रकाशक
भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान,
बीकानेर [राजस्थान]

● मुद्रक
एजूकेशनल प्रेस, बीकानेर

विषय-सूची

आभार

भारतीय विद्या मन्दिर ग्रन्थ माला का छठा पुष्प पाठकों की सेवा में सहर्ष प्रस्तुत है। इसके प्रकाशन मे राजस्थान सरकार के शिक्षा विभाग एवं परम वैष्णव साहित्यानुरागी श्रीमान गिरधरदास जी मूंधड़ा द्वारा उदारता पूर्ण प्रदत्त आर्थिक सहयोग के लिए हम उनके बड़े आभारी हैं।

वैष्णव भक्ति साहित्य पर संस्था का यह पहला ग्रन्थ है। आशा है इसी प्रकार भविष्य में भी संस्था अपने शुभचिंतकों व सहायकों के सहयोग एवं सहायता से उपयोगी ग्रन्थों का प्रकाशन करती रहेगी।

मूलचन्द पारीक
रजिस्ट्रार
भारतीय विद्या मन्दिर, बीकानेर

प्राक्कथन

कालिय और कंस की दुरभिसंधि के कारण आये दिन ब्रजमण्डल में नये-नये उत्पात हो रहे थे। जन धन की अपार क्षति हो रही थी। सारे भूभाग में क्षोभ की लहर दौड़ रही थी। जनता हाथों में तलवार लिए दुष्टों का दलन करने के लिए सन्नद्ध थी। भगवान कृष्ण ने उनका नेतृत्व किया। ब्रजमण्डल की कृषि और गोधन की समृद्धि के लिए यह आवश्यक हो गया कि विषधर कालिय का तत्काल दमन किया जाय। एक दिन कन्दुक-क्रीडा के निमित्त कृष्ण ने कालिय को उसके घर में जा दबाया। पुराने सारे वैर चुका दिये। इस पौराणिक आख्यान को कवि सांया झूला ने भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से मौलिक रूप में काव्याभिव्यक्ति दी है। काव्य सौंदर्य और शब्दगत विशेषताओं पर भूमिकाकार और संपादक महोदय ने विशद प्रकाश डाल दिया है, मेरे लिए कुछ कहने को शेष नहीं रहा है। रचनाकार ने समसामयिक सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों और आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में इस कृति का सृजन किया है और वह इसमें पूर्ण सफल हुआ है। साधना के एक एक शब्द से अभिमंत्रित यह काव्यकृति पुरातन काल से कवि की कीर्ति का कलश रही है, और आज की बदली हुई परिस्थितियों में भी यह हमें दुष्टों का दलन करने की बराबर प्रेरणा दे रही है। अत्याचारियों के गर्व को चूर कर जन जीवन को निरापद करने की यह शौर्य पूर्ण गाथा लौकिक साहित्य की अमर-निधि है और इसीलिए इसे पूरी मेहनत के साथ सम्पादित कर साहित्य जगत के हाथों में सौंपा गया है।

प्रिय श्री मूलचंद 'प्राणेश' ने डिंगल भाषा और साहित्य की भाव प्रवणता और उसके व्याकरण के मर्म को समझकर आधुनिक साहित्य के विद्वानों के लिए कृति को अधिक से अधिक उपयोगी बनाने की चेष्टा की है। वह हम सबके साधुवाद के पात्र हैं।

हमें इस बात का गर्व और हर्ष है कि इस महत्वपूर्ण काव्य ग्रन्थ को नये रूप में प्रकाशित करने का श्रेय शोध प्रतिष्ठान को प्राप्त हुआ है। आशा है, विज्ञ पाठक इसका पूरा आनंद उठा पायेंगे।

सत्यनारायण पारीक
अध्यक्ष
भा वि भ शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर

आभार

भारतीय विद्या मन्दिर ग्रन्थ माला का छठा पुष्प पाठकों की सेवा में सहर्ष प्रस्तुत है। इसके प्रकाशन में राजस्थान सरकार के शिक्षा विभाग एवं परम वैष्णव साहित्यानुरागी श्रीमान गिरधरदास जी मूंधड़ा द्वारा उदारता पूर्ण प्रदत्त आर्थिक सहयोग के लिए हम उनके बड़े आभारी हैं।

वैष्णव भक्ति साहित्य पर संस्था का यह पहला ग्रन्थ है। आशा है इसी प्रकार भविष्य में भी संस्था अपने शुभचिंतकों व सहायकों के सहयोग एवं सहायता से उपयोगी ग्रन्थों का प्रकाशन करती रहेगी।

मूलचन्द पारीक
रजिस्ट्रार
भारतीय विद्या मन्दिर, बीकानेर

प्राक्कथन

कालिय और कंस की दुरभिसंधि के कारण आये दिन ब्रजमण्डल में नये नये उत्पात हो रहे थे। जन धन की अपार क्षति हो रही थी। सारे भूभाग मे क्षोभ की लहर दौड रही थी। जनता हाथों में तलवार लिए दुष्टों का दलन करने के लिए सन्नद्ध थी। भगवान कृष्ण ने उनका नेतृत्व किया। ब्रजमण्डल की कृषि और गोधन की समृद्धि के लिए यह आवश्यक हो गया कि विषधर कालिय का तत्काल दमन किया जाय। एक दिन कन्दुक-क्रीडा के निमित्त कृष्ण ने कालिय को उसके घर मे जा दबाया। पुराने सारे वैर चुका दिये। इस पौराणिक आख्यान को कवि सांया झूला ने भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से मौलिक रूप में काव्याभि-व्यक्ति दी है। काव्य सौंदर्य और शैलीगत विशेषताओं पर भूमिकाकार और सपादक महोदय ने विशद प्रकाश डाल दिया है, मेरे लिए कुछ कहने को शेष नहीं रहा है। रचनाकार ने समसामयिक सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों और आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में इस कृति का सर्जन किया है और वह इसमे पूर्ण सफल हुआ है। साधना के एक एक शब्द से अभि-मत्रित यह काव्यकृति पुरातन काल से कवि की कीर्ति का कलश रही है, और आज की बदली हुई परिस्थितियों मे भी यह हमें दुष्टों का दलन करने की बराबर प्रेरणा दे रही है। अत्याचारियों के गर्व को चूर कर जन जीवन को निरापद करने की यह ओज पूर्ण गाथा लौकिक साहित्य की अमर-निधि है और इसीलिए इसे पूरी मेहनत के साथ सम्पादित कर साहित्य जगत के हाथों मे सौंपा गया है।

प्रिय श्री मूलचन्द 'प्राणेश' ने डिंगल भाषा और साहित्य की भाव प्रवणता और उसके व्याकरण के मर्म को समझकर आधुनिक साहित्य के विद्वानों के लिए कृति को अधिक से अधिक उपयोगी बनाने की चेष्टा की है। वह हम सबके साधुवाद के पात्र हैं।

हमें इस बात का गर्व और हर्ष है कि इस महत्वपूर्ण काव्य ग्रन्थ को नये रूप में प्रकाशित करने का श्रेय शोध प्रतिष्ठान को प्राप्त हुआ है। आशा है, विज्ञ पाठक इसका पूरा आनंद उठा पायेंगे।

सत्यनारायण पारीक

अध्यक्ष

भा वि म शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर

आभार

भारतीय विद्या मन्दिर ग्रन्थ माला का छठा पुष्प पाठकों की सेवा में सहर्ष प्रस्तुत है। इसके प्रकाशन में राजस्थान सरकार के शिक्षा विभाग एवं परम वैष्णव साहित्यानुरागी श्रीमान गिरधरदास जी मूंधड़ा द्वारा उदारता पूर्ण प्रदत्त आर्थिक सहयोग के लिए हम उनके बड़े आभारी हैं।

वैष्णव भक्ति साहित्य पर संस्था का यह पहला ग्रन्थ है। आशा है इसी प्रकार भविष्य में भी संस्था अपने शुभचिंतकों व सहायकों के सहयोग एवं सहायता से उपयोगी ग्रन्थों का प्रकाशन करती रहेगी।

मूलचन्द पारीक
रजिस्ट्रार
भारतीय विद्या मन्दिर, बीकानेर

प्राक्कथन

कालिय और कंस की दुरभिसंधि के कारण आये दिन ब्रजमण्डल में नये नये उत्पात हो रहे थे। जन धन की अपार क्षति हो रही थी। सारे भूभाग में क्षोभ की लहर दौड़ रही थी। जनता हाथों में तलवार लिए दुष्टों का दलन करने के लिए सन्नद्ध थी। भगवान कृष्ण ने उनका नेतृत्व किया। ब्रजमण्डल की कृषि और गोधन की समृद्धि के लिए यह आवश्यक हो गया कि विषधर कालिय का तत्काल दमन किया जाय। एक दिन कन्दुक-क्रीड़ा के निमित्त कृष्ण ने कालिय को उसके घर में जा दबाया। पुराने सारे वैर चुका दिये। इस पौराणिक आख्यान को कवि सांया झूला ने भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से मौलिक रूप में काव्याभि-व्यक्ति दी है। काव्य सौंदर्य और कलागत विशेषताओं पर भूमिकाकार और सम्पादक महोदय ने विशद प्रकाश डाल दिया है, मेरे लिए कुछ कहने को शेष नहीं रहा है। रचनाकार ने समसामयिक सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों और आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में इस कृति का सृजन किया है और वह इसमें पूर्ण सफल हुआ है। साधना के एक एक शब्द से अभि-मन्त्रित यह काव्यकृति पुरातन काल से कवि की कीर्ति का कलश रही है, और आज की बदली हुई परिस्थितियों में भी यह हमें दुष्टों का दलन करने की बराबर प्रेरणा दे रही है। अत्याचारियों के भय को दूर कर जन जीवन को निरापद करने की यह ओज पूर्ण गाथा लौकिक साहित्य की अमर-निधि है और इसीलिए इस पूरी मेहनत के साथ सम्पादित कर साहित्य जगत के हाथों में सौंपा गया है।

प्रिय श्री मूलचन्द 'प्राणेश' ने डिंगल भाषा और साहित्य की भाव-प्रवणता और उसके व्याकरण के पक्ष को समझकर आधुनिक साहित्य के विद्वानों के लिए कृति को अधिक से अधिक उपयोगी बनाने की चेष्टा की है। वह हम सबके साधुवाद के पात्र हैं।

हमें इस बात का गर्व और हर्ष है कि इस महत्वपूर्ण काव्य ग्रन्थ को नये रूप में प्रकाशित करने का श्रेय शोध प्रतिष्ठान को प्राप्त हुआ है। आशा है, विज्ञ पाठक इसका पूरा आनंद उठा पायेंगे।

सत्यनारायण पारीक

अध्यक्ष

रा. वि. भ. शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर

सम्पादकीय

शोध प्रतिष्ठान द्वारा संचालित साप्ताहिक साहित्य गोष्ठी में एक दिन डिंगल भाषा और साहित्य विषय की चर्चा चल रही थी । प्रतिष्ठान के तत्कालीन संचालक श्रीमान् अक्षयचन्द्रजी शर्मा एम. ए. ने डिंगल काव्य पर कर्ण कटुता एवं दुरूहता का आरोप लगाने वाले व्यक्तियों की अल्पज्ञता पर तरस खाते हुए प्रस्तुत 'नागदमण' की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया तथा साथ ही इस कृति का सुन्दर ढंग से सम्पादन करके प्रकाशित करवाने की आवश्यकता भी प्रकट की और इसके सम्पादन का कार्य मुझे सौंपा ।

'नागदमण' डिंगल भक्ति साहित्य की एक उत्कृष्ट कृति होने के कारण भक्त एवं कवि तो अपने संकलनग्रन्थों (गुटकों) में इसका संकलन करते ही थे पर साथ ही राजस्थान में इस काव्य का उपयोग सर्पविष निवारणार्थ झाड़ (मन्त्र) के रूप में होने के कारण जन सामान्य भी इस कृति को अपने पास सुरक्षित रखने का प्रयास करता था । राजस्थान प्रान्त में नागदमण की शताधिक प्रतियों का उपलब्ध होना इस बात का प्रबल प्रमाण है ।

प्रस्तुत सम्पादन का कार्य आरम्भ करने पर मुझे 'नागदमण' की लगभग तीस प्रतियों के अवलोकन का सौभाग्य प्राप्त हुआ । यद्यपि ये प्रतियां सं० १७१० वि० से लगा कर सं० १९९० वि० तक की प्रलम्ब अवधि में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा लिखित एवं सुरक्षित थीं, फिर भी उन प्रतियों में पर्याप्त रूप से पाठ साम्य दृष्टिगोचर हुआ । यदि उनमें कोई अन्तर था वह या तो प्रतिलिपिकार द्वारा अपने मानदण्ड द्वारा विनिर्मित शैली के कारण प्रतीत हुआ या फिर दुर्बोध शब्दों के स्थान पर सरलीकरण की प्रवृत्ति के कारण । अतः उक्त सभी उपलब्ध प्रतियों से पाठान्तर लेकर पृष्ठभार एवं समय के दुरुपयोग से बचने के लिए उनमें से केवल छह प्रतियों को मूल-पाठ एवं पाठ-भेद की दृष्टि से चुना गया । ये छहों

प्रतियाँ उपयुक्त सभी प्रतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं । इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

- 'क' प्रति हस्तलिखित

  प्राप्ति स्थान—श्री वर्द्धमान ज्ञान भण्डार, बीकानेर ।
  अनुलिपिकार—वोहरा रामचन्द्र ।
  अनु लिपि काल—सं० १७१७ वि० भाद्रपद कृष्णा ८ शनि ।
  अनुलिपि स्थान—जतारण

- 'ख' प्रति हस्तलिखित

  प्राप्तिस्थान—श्री भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर ।
  अनुलिपिकार—मयेन कुशाळा
  अनुलिपिकाल—सं० १७५२ वि० द्वितीय आषाढ़ शुक्ला १२
  अनुलिपिस्थान—बीकानेर (अनु०)

- 'ग' प्रति हस्तलिखित

  प्राप्ति स्थान—श्री खजान्ची कला भवन पुस्तकालय, बीकानेर ।
  अनुलिपिकार—अज्ञात
  अनुलिपिकाल—सं० १८०९ वि० पौष कृष्णा ७ गुरु
  अनुलिपि स्थान—अज्ञात

- 'घ' प्रति हस्तलिखित

  प्राप्ति स्थान—श्री अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर ।
  अनुलिपिकार—पं० गुणसेन गणि तच्छिष्य पं० यशोलाभ मुनि
  अनुलिपिकाल—सं० १७१० वि० मार्गशीर्ष शुक्ला ५ सोम
  अनुलिपिस्थान—श्री वेगानमेर (जसलमेर)

- 'ङ' प्रति मुद्रित

  प्राप्तिस्थान—राज्य कवि लखधीरदानजी हम्मीरदान, पालणपुर ।
  सम्पादक—मोतीश्वर कुलोत्पन्न श्री हमीरदान
  मुद्रणकाल—१८ वीं शताब्दी की तीन प्रतियों के आधार पर सं० १९८९ वि० में मुद्रित

- 'च' प्रति हस्तलिखित

  प्राप्ति स्थान—श्री अभय जन ग्रन्थालय, बीकानेर ।
  अनुलिपिकार—अज्ञात
  अनुलिपिकाल—१९ वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध (अनु०)
  अनुलिपि स्थान—अज्ञात

मूल पाठ की प्रति

सम्पादनार्थ निर्वाचित छहों प्रतियों में 'क' प्रति प्राचीन एवं संतन की दृष्टि से शुद्ध होने के कारण इस प्रति का मूलपाठ में उपयोग किया गया है। यद्यपि प्रतिलिपि के कालक्रम से 'घ' प्रति सभी प्रतियों से प्राचीन है, परन्तु आदि मध्य व चौबीस छन्द त्रुटित होने के कारण इसको मूल पाठ का आधार नहीं बनाया जा सका।

पाठ भेद की प्रतियां

पाठ भेद के लिए निर्वाचित प्रतियों को प्रतिलिपि के कालक्रमानुसार न रखकर पाठ की निकटतम स्थिति के अनुसार रखा गया है।

पाठ भेद अंकन

पाठ भेद के रूप में प्रतिलिपिकारों के शैलीगत विभेद को अंकित नहीं किया गया है। केवल उन्हीं पाठों को पाठ भेद के रूप में स्वीकार किया गया है जिनके द्वारा या तो मूल शब्द के स्वरूप की पुष्टि होती हो या जिनके द्वारा अर्थगत विशेषता प्रगट होती हो। उक्त छहों प्रतियों में से जिन प्रतियों में कम या अधिक छन्द उपलब्ध होते हैं उन्हें यथास्थान 'नहीं है' व 'अ० पा०' के संकेत द्वारा दिखाया गया है।

शैलीगत विषमताओं का परिहार

(अ) राजस्थान के प्रतिलिपिकारों के द्वारा संयुक्त या स्वतन्त्र रूप में प्रयुक्त 'इकार' या 'ईकार' को सवत्र दीर्घ लिखने की परम्परा रही है इसी प्रकार संयुक्त या स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त 'उकार' या 'ऊकार' को ह्रस्व लिखा गया है। परन्तु मूलपाठ में उक्त दोनों स्वरों का छद अथवा व्याकरण के अनुसार जिस स्थान पर जैसा रूप होना चाहिए, कर दिया है।

(आ) राजस्थान के कई प्रतिलिपिकारों ने 'ऊ' के स्थान पर 'वु' लिखा है परन्तु मूलपाठ में उसे 'ऊ' ही स्वीकार किया है। यथा—'ऊमो' के स्थान पर 'वुमो' न लिखकर उसे 'ऊमो' ही लिखा गया है।

(इ) राजस्थान के प्राय प्रतिलिपिकारों ने 'ड' या 'ड़' के स्थान पर सर्वत्र 'ड' ही लिखा है इसी प्रकार 'ल' या 'ळ' के स्थान पर सर्वत्र 'ल' ही लिखा है। परन्तु मूलपाठ में उसे ध्वनि के अनुसार 'ड़' एवं 'ळ' कर दिया गया है।

(ई) राजस्थान के सभी प्रतिलिपिकारों ने सानुनासिक ध्वनि एवं

अनुस्वार को प्रकट करने के लिए सर्वत्र शिरोबिन्दु (मस्ते) का प्रयोग किया है। अत मूलपाठ मे भी उसे ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया गया है।

(ज) राजस्थान के कई प्रतिलिपिकारों द्वारा अनुनासिक वर्णों से पूर्व के वर्ण पर शिरोबिन्दु (मस्ते) का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। परन्तु मूलपाठ में उसे स्वीकार नहीं किया गया है। यथा—'मुण'या राणी' को 'मु णँ' या 'रांणी' न लिखकर 'मुणँ' या 'राणी' ही लिखा गया है।

(झ) नागदमण की कई प्रतियों मे 'औ' के स्थान पर 'अउ' एव 'ऐ' के स्थान पर 'अइ' का प्रयोग भी देखने मे आया है, जो छन्द विधान के अनुसार उपयुक्त नहीं है। अत मूलपाठ में उक्त दोनों स्वरों को यदि वे शब्द के अत मे प्रयुक्त हुए हैं (केवल सबोधन या तिरस्कारवाची शब्दों को छोड़कर) तो उनको सर्वत्र 'ओ' या 'ऐ' लिखा गया है और यदि वे शब्द के मध्य में प्रयुक्त हुए हैं तो उन्हें यथा स्थिति 'ओ' या 'औ' एव 'ए' या 'ऐ' लिखा गया है।

आलोचनात्मक अध्ययन

आलोचनात्मक अध्ययन मे जिन जिन सदर्भ ग्रथों एव जिन जिन महानुभावों के अभिमत का उपयोग किया गया है, उन सब का यथास्थान पाद टिप्पणियों में उल्लेख कर दिया गया है।

हिन्दी भावार्थ

हिन्दी भावार्थ लिखते समय मूल शब्दों के निकटतम ध्वनित अर्थ पर ही अधिक बल दिया गया है तथा अपनी ओर से कल्पित शब्दावली का कम से कम प्रयोग किया गया है। यदि किसी स्थल पर शब्दार्थ ठीक होने पर भी कोई भाव अस्पष्ट रह गया है तो वहां उसे 'अर्थात्' करके सुस्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है।

आवरण पृष्ठ का चित्र

आवरण पृष्ठ पर अकित चित्रों मे से मध्य भाग का चित्र मडोवर से प्राप्त एव जोधपुर के सरदार म्यूजियम में सुरक्षित गुप्तकालीन स्तूप, इसके दाहिने भागवाला चित्र मद्रास मे प्राप्त आठवीं शताब्दी की कांस्य मूर्ति एव बायें भागवाला चित्र आधुनिक लीला प्रकार की, सरल रेखानुकृतियां हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत कृति को अधिक से अधिक उपादेय एव बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया गया है। इसे सफल बनाने में शोध प्रतिष्ठान के वर्तमान सचालक श्रीमान् सत्यनारायणजी पारीक एम ए के

मूल-पाठ की प्रति

सम्पादनार्थ निर्वाचित छहों प्रतियों में 'क' प्रति प्राचीन एवं लेखन की दृष्टि से शुद्ध होने के कारण इस प्रति का मूलपाठ में उपयोग किया गया है। यद्यपि प्रतिलिपि के कालक्रम से 'ख' प्रति सभी प्रतियों से प्राचीन है, परन्तु आदि भाग के चौबीस छन्द त्रुटित होने के कारण इसको मूल पाठ का आधार नहीं बनाया जा सका।

पाठ भेद की प्रतियां

पाठ भेद के लिए निर्वाचित प्रतियों को प्रतिलिपि के कालक्रमानुसार न रखकर पाठ की निकटतम स्थिति के अनुसार रखा गया है।

पाठ भेद अंकन

पाठ भेद के रूप मे प्रतिलिपिकारो के शैलीगत विभेद को अंकित नहीं किया गया है। केवल उन्हीं पाठों को पाठ भेद के रूप मे स्वीकार किया गया है जिनके द्वारा या तो मूल शब्द के स्वरूप की पुष्टि होती हो या जिनके द्वारा अर्थगत विशेषता प्रगट होती हो। उक्त छहो प्रतियों में से जिन प्रतियों में कम या अधिक छन्द उपलब्ध होते हैं उन्हें यथास्थान 'नहीं हैं' व 'अ० पा०' के संकेत द्वारा दिखाया गया है।

शैलीगत विषमताओं का परिहार

(अ) राजस्थान के प्रतिलिपिकारों के द्वारा संयुक्त या स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त 'इकार' या 'ईकार' को सर्वत्र दीर्घ लिखने की परम्परा रही है इसी प्रकार संयुक्त या स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त 'उकार' या ऊकार' को ह्रस्व लिखा गया है। परन्तु मूलपाठ में उक्त दोनों स्वरों का छंद अथवा व्याकरण के अनुसार जिस स्थान पर जैसा रूप होना चाहिए, कर दिया है।

(आ) राजस्थान के कई प्रतिलिपिकारों ने 'ऊ' के स्थान पर 'वु' लिखा है परन्तु मूलपाठ में उसे 'ऊ' ही स्वीकार किया है। यथा—'ऊभो' के स्थान पर 'वुभो' न लिखकर उसे 'ऊभो' ही लिखा गया है।

(इ) राजस्थान के प्राय प्रतिलिपिकारों ने 'ड' या 'ड़' के स्थान पर सर्वत्र 'ड' ही लिखा है, इसी प्रकार 'ल' या ळ' के स्थान पर सर्वत्र 'ल' ही लिखा है। परन्तु मूलपाठ में उसे ध्वनि के अनुसार 'ड़' एवं 'ळ' कर दिया गया है।

(ई) राजस्थान के सभी प्रतिलिपिकारों ने सानुनासिक ध्वनि एवं



अनुस्वार को प्रकट करने के लिए सर्वत्र शिरोबिन्दु (मस्ते) का प्रयोग किया है। अतः मूलपाठ में भी उसे ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया गया है।

(उ) राजस्थान के कई प्रतिलिपिकारों द्वारा अनुनासिक वर्णों से पूर्ववर्ती वर्ण पर शिरोबिन्दु (मस्ते) का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। परन्तु मूलपाठ में उसे स्वीकार नहीं किया गया है। यथा—'मुण'या राणो' को 'मुं णं' या 'रांणो' न लिखकर 'मुण' या 'राणी' ही लिखा गया है।

(ऊ) मागदमल की कई प्रतियों में 'औ' के स्थान पर 'अउ' एवं 'ऐ' के स्थान पर 'अइ' का प्रयोग भी देखने में आया है, जो छन्द विधान के अनुसार उपयुक्त नहीं है। अतः मूलपाठ में उक्त दोनों स्वरों को यदि वे शब्द के अंत में प्रयुक्त हुए हैं (केवल सम्बोधन या तिरस्कारवाची शब्दों को छोड़कर) तो उनको सर्वत्र 'ओ' या 'ए' लिखा गया है और यदि वे शब्द के मध्य में प्रयुक्त हुए हैं तो उन्हें यथा स्थिति 'अउ' या 'औ' एवं 'ए' या 'ऐ' लिखा गया है।

आलोचनात्मक अध्ययन

आलोचनात्मक अध्ययन में जिन जिन सन्दर्भ-ग्रन्थों एवं जिन जिन महानुभावों के अभिमत का उपयोग किया गया है, उन सब का यथास्थान पाद टिप्पणियों में उल्लेख कर दिया गया है।

हिन्दी भावार्थ

हिन्दी भावार्थ लिखते समय मूल शब्दों के निकटतम ध्वनित अर्थ पर ही अधिक बल दिया गया है तथा अपनी ओर से कल्पित शब्दावली का कम से कम प्रयोग किया गया है। यदि किसी स्थल पर शब्दार्थ ठीक होने पर भी कोई भाव अस्पष्ट रह गया है तो वहां उसे 'अर्थात्' करके सुस्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है।

आवरण पृष्ठ का चित्र

आवरण पृष्ठ पर अंकित चित्रों में से मध्य भाग का चित्र मंडोवर से प्राप्त एवं जोधपुर के सरदार म्यूजियम में सुरक्षित गुप्तकालीन स्तूप, इधर दाहिने भागवाला चित्र मद्रास में प्राप्त आठवी शताब्दी की कांस्य मूर्ति एवं बायें भागवाला चित्र आधुनिक लोक कला की, सरल रेखानुकृतियां हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत कृति को अधिक से अधिक उपादेय एवं बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया गया है। इसे सफल बनाने में शोध प्रतिष्ठान के वर्तमान संचालक श्रीमान् सत्यनारायणजी पारीक एम ए के

निर्देशन, श्री नरोत्तमदास जी स्वामी एम ए, श्री उदयराजजी उज्वल, श्री चन्द्रदानजी चारण एम ए श्री बद्रीप्रसादजी साकरिया श्री सूर्यशंकरजी पारीक और श्री पुरुषोत्तमजी मेनारिया के सुझावों एवं श्री अभय जैन ग्रंथालय, बीकानेर के संचालक श्री अगरचन्दजी नाहटा, श्री खजांची पुस्तकालय बीकानेर के संचालक श्री मोतीचंदजी खजांची, श्री अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर के श्री बाबूरामजी सक्सेना और प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के उपसंचालक श्री गोपालनारायणजी बहुरा के सहयोग का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। एतदर्थ मैं उन सभी महानुभावों का आभारी हूँ। अंत में मैं राजस्थान बालभारती के प्रिंसिपल श्री रामेश्वरप्रसाद जी पांडिया एम ए का विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने समयाभाव की स्थिति में भी समय निकालकर प्रस्तुत ग्रंथ की विद्वत्तापूर्ण भूमिका लिखने का कष्ट किया है।

—मूलचन्द प्राणेश

भूमिका

सांया झूला कृत 'नाग दमण' १७वीं शताब्दी में लिखी डिंगल साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं में से एक है। सांया झूला चारण कवि थे। आपको ईडर राज्य में राज्याश्रय प्राप्त था। बाल्यकाल में ही आपकी रुचि भगवद्भक्ति में जागृत हो चुकी थी। अवस्था के साथ साथ इसका विकास होता गया। आपकी अपनी प्रत्युत्पन्नमति तथा भक्ति भावना के कारण तत्कालीन चारण तथा राज समाज बड़े सम्मान की दृष्टि से देखता था। चारण कवि श्री सांया जी के लिखे दो ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं—'रुक्मणी हरण' और दूसरा 'नाग दमण'। नाग दमण की रचना रुक्मणी हरण के पश्चात् हुई है। कवि ने इसको अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में लिखा है। अतः इसमें भाषा प्रांजलता एवं भाव प्रौढ़ता का होना स्वाभाविक ही है।

भारतीय साहित्य एवं जन जीवन में राम और कृष्ण इन दो प्रसिद्ध अवतारों का बड़ा महत्व है। निराशा और म्लान हिन्दू जनता के जीवन में आशा एवं उत्साह का संचार करने हेतु मनीषी भगवद्भक्त कवियों ने इन दोनों अवतारों के जीवन की लोक रंजन एवं लोक मंगल कारी विविध लीलाओं का चित्रण अपने काव्य में किया है। कृष्ण की लीलाओं में नाग दमण, नाग लीला, कालीय दह लीला अथवा कमल लीला का विशेष महत्व है। इसका वर्णन भागवत पुराण, विष्णु पुराण, पद्म पुराण, हरिवंश पुराण एवं ब्रह्मवैवर्त पुराण में भी प्राप्त होता है। कवि की दृष्टि विलक्षण होती है। इन विभिन्न स्थलों से प्राप्त कथासामग्री को ग्रहण कर वह अपने युग के आलोक में उसकी अभिव्यक्ति करता है। हिन्दी में सब प्रथम कालिय दमन लीला की अवतारणा कृष्ण लीला के अमर गायक महाकवि सूरदास के गीतों में हुई। नाग दमण लीला से हिन्दी तथा गुजराती के अनेक कवि प्रभावित हुए और इन्होंने मुक्तकंठ से इस कथा प्रसंग को लेकर अनेक गीत गाए। नरसी मेहता सूरदास के समकालीन कवि थे। उन्होंने भी इस लीला का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। शताब्दियां अतीत के अन्धकार में विलीन हो गईं, किन्तु नरसी कृत नाग-दमण के गीत आज भी लोगों की जबान पर सुने जाते हैं। सांया जी वैष्णव भक्ति धारा से सरसित गुजरात के ही सपूत थे। उनकी नाग दमण

रचना आज भी वहा के लोक कंठों मे समायी हुई है ।

नाग दमण की गणना खड काव्य के अतर्गत आती है । प्रबध काव्य अथवा खड काव्य के प्रारम्भ मे मगलाचरण एक काव्य परम्परा रही है । मगलाचरण तीन प्रकार के होते हैं । (१) नमस्कारात्मक (२) आशीर्वादात्मक एव (३) वस्तुनिर्देशात्मक । इस काव्य का प्रारम्भ भी निम्नलिखित पक्तियों से होता है—

वळ वो सादर वरणवू ,सारद करो पसाय ।
पवाडो पनगा सिर, जदुपति कीधो जाय ।।

कवि मगलाचरण की प्रथम पक्ति में बुद्धि की अधिष्ठात्री मातेश्वरी शारदा से कृपारूप आशीर्वाद की याचना करता है ताकि वह कालिय नाग के सिर पर चढ़कर कृष्ण द्वारा किए गए युद्ध चरित्र का गान कर सके । दूसरी पक्ति कथा वस्तु की ओर निर्देश करती है । इसमें आशीर्वादात्मकता के साथ वस्तु निर्देशन भी है । अत इस मगलाचरण को आशीर्वादात्मक वस्तु निर्देशक मगलाचरण कहना ही उचित होगा ।

'नाग दमण' का कथानक पौराणिक है । इस पौराणिक कथा के माध्यम से कवि अपनी युगानुकूल भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है । सांया झूला मुगल बादशाह अकबर के समकालीन थे । इतिहासकारों ने अकबर के शासनकाल को उत्तम बताने में कोई सकोच नहीं किया है । ऊपर की दृष्टि से अकबर का शासन चाहे भव्य एव शानदार रहा हो, परन्तु सामाजिक एव सांस्कृतिक दृष्टि से उत्तम नहीं कहा जा सकता । समाज गरीबी एव दैन्य का शिकार था । तुलसीदास की की पक्तियां भी यही बताती हैं—'भिखारी को न भीख, न चाकर को चाकरी ।' दीन-इलाही धर्म की स्थापना के साथ साथ हिन्दू सस्कृति का लोप होना प्रारम्भ हो गया था । मुगल बादशाहों द्वारा हिन्दू सस्कृति एव समाज पर शनैं शनै होने वाले इस पदाघात की ओर भक्त कवियों का ध्यान गया और उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से सस्कृति उद्धार एव समाज कल्याण के गीत सुनाने प्रारम्भ किए ।

भारतीय ग्रामीण समाज मे पशु धन का बडा महत्व है । पशु धन मे भी गौ धन का विशिष्ट स्थान है । समाज की सम्पन्नता तथा विपन्नता का मापदण्ड पशुओं की सख्या ही है । मुगल शासनकाल में गौ हत्या का प्रचलन था । उदार मुगल बादशाहों की गौ हत्या निषेधाज्ञाओं की अवहेलना मुगल सामतों द्वारा होती रहती थी । सांया-झूला ने नाग दमण मे गौ महत्ता के प्रसग की काल्पनिक सृष्टि कर इस पशु धन की रक्षा का स्पष्ट सकेत किया है । नागरानी को स्वय श्रीकृष्ण कहते हैं कि—

चव मात, भ्राता चिन्हे धेन चारी, वहै आज ते नागणी मूस वारी ।
सुरभी तणी नागणी ऊच मेवा, गळ वध्व नाचा मुरी नेह प्रेवा ।।

अब विनागिनी मोक्ष दायिनी गौ के सांस्कृतिक स्वरूप को बताने के पश्चात् कवि कृष्ण से इस पशु के आर्थिक महत्व पर भी प्रकाश डलवाता है । गौ रस से क्या नहीं बनता ? अनेक तरह के खाद्य पदार्थ तयार किये जाते हैं । ब्रज के पेडे मिश्री मावा तो आज भी प्रसिद्ध है ।

दही दूध रावा चो आ सुखदाई, मठा घोळिया खाड खोहा मळाई ।

औद्योगिक विकास का आकांक्षी आज का भारत यन्त्र युग में श्वास ले रहा है, परन्तु कवि के समय का भारत गोबर युग में था । तत्कालीन सारे आर्थिक समाज का ढांचा कृषि पर ही निर्भर था । हलकर्षण का मुख्य साधन बल ही थे । इस सारी भारत भूमी पृथ्वी का भार बल के कंधों पर ही था । कवि गौ के आर्थिक महत्व की चर्चा करते हुए बलों की उपयोगिता पर प्रकाश डालता है ।

अवनी तणो भारि ले कंध आयो, जुवो नागणो ने हुनो गन्नु जायो ।
खळा हळा नागळा पाण खेती, अभ नागणी हाथ में आय एती ।।

इस महत्वपूर्ण गोधन को चराने को वारी श्रीकृष्ण की है और इसकी रक्षा करना वे अपना परमधर्म समझते हैं । कालिय नाग ने यमुना के सारे जल को विषाक्त कर दिया है । इस जल का पान करने से गौ बछडे सब मर जाते हैं । गौ हत्यारे इस कालिय को मार कर गौओं को बचाना ही कृष्ण अपना परम कर्तव्य समझते हैं । इस काव्य के माध्यम से कवि परोक्ष रूपेण यही कहना चाहता है कि अत्याचारियों द्वारा मारी जाने वाली गौ या पशु धन का संरक्षण करना हर भारतीय कृषक का प्रथम कर्तव्य है ।

इसके अतिरिक्त कवि वैष्णव भक्त है । इस कथा के माध्यम से वह अपनी भक्ति भावना का प्रकाशन करता है । कृष्ण जीवन की इस माधुर्य भरी ओजस्वी लीला का गान करना ही कवि का लक्ष्य है ।

प्राचीन आचार्यों ने शास्त्रीय दृष्टि से काव्य के अनेक भेद किए हैं । मुख्य भेद प्रबन्ध और मुक्तक हैं । कथा वस्तु की दृष्टि से प्रबन्ध काव्य को भी दो भागों में बांटा गया है । महाकाव्य और खंड काव्य । नाग दमण की रचना कृष्ण जीवन की एक विशिष्ट कालिय दमन की घटना को लेकर हुई है । अत इसकी गणना खंड काव्य में ही करना समीचीन है । वीरगाथा काल में रस प्रधान कथा काव्य को 'रासो' नाम से अभिहित किया जाता था । मराठी और डिंगल साहित्य में एक 'पवाडा' नामक काव्य का प्रकार भी पाया जाता है । पवाडा उस काव्य को कहते

हैं जिसमें युद्ध चरित्र का गान हो । 'नाग दमण' रचना को भी पवाड़ा की संज्ञा दी जा सकती है । कवि ने भी प्रारम्भ में इस चरित्र को पवाड़ा संज्ञा से अभिहित किया है—

पवाड़ो पन्नगा सिर, जदुपति कीधो जाय ।

पवाड़ा वीर रस प्रधान काव्य होता है । वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है । कवि की भक्ति भावनायें इस काव्य में स्थान स्थान पर प्रकट हुई हैं । काव्य में भक्ति भावना के प्राचुर्य एवं प्राबल्य को देखने से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि 'पवाड़ा' गायक अपने भक्त कवि को नहीं दबा सका है । भक्ति में शान्त रस रहता है । इस काव्य कथा की समाप्ति कालिय को व्रज वीथिकाओं में घुमाकर, नन्द के आंगन में फिराने के साथ होती है—ताकि यहां की रजस्पर्श से उसकी देह चिन्ता दूर हो जावे—अर्थात् उसको मुक्ति मिले । इस प्रकार इस लघु कथा काव्य का पर्यवसान शान्त भाव के साथ होता है ।

प्राचीन आचार्यों ने काव्य की परिभाषा करते हुए रस को ही काव्य की आत्मा बताया है । नाग दमण भक्ति भावना से पूरित होते हुए भी वीर रस प्रधान काव्य है । ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण करने के पश्चात् कवि दूसरे ही छन्द में कृष्ण के साहसपूर्ण कार्यों को याद करता है ।

प्रभू घणा चा पाड़िया, दश्य वडा चा दंत ।
के पालण पोढ़िया, मैं पय पान करंत ।।

अतः इस काव्य को भक्ति भावना से प्रेरित पवाड़ा काव्य कहें तो कोई अनुचित नहीं होगा ।

काव्य की कथा का प्रारम्भ माता यशोदा द्वारा सोये कृष्ण को गो चारण के लिए जगाने से होता है । कृष्ण और ग्वाल-बाल हर्षित होकर जंगल में आते हैं । यमुना के किनारे गौएं घास चर रही हैं । सारा गोप समाज खेल खेलने को आतुर है । कृष्ण इस टोली के नायक हैं । चारों तरफ उत्साह और उमंग का वातावरण है । देखते ही देखते दड़ी गेड़िये का खेल प्रारम्भ हो जाता है । उत्साह में आकर खिलाड़ी ने जोर से टोरा (hit) लगाया और गेंद यमुना में जा पड़ी । यमुना में महा पराक्रमी कालिय नाग का निवास है । गेंद उसके आवास में पहुंच ग[redacted] । यहां से गेंद लेकर आना साधारण काम नहीं । सारा बाल समाज स्तब्ध एवं बेचैन है । कृष्ण के हृदय में वीरत्व जागृत हुआ । गौ हत्यारे कालिय को मारने का उपयुक्त अवसर जानकर वे यमुना के नाग कुण्ड में कूद पड़े । यहीं से दड़ी-गेड़िये खेल की समाप्ति तथा दूसरा खेल कृष्ण कालिय-

युद्ध प्रारम्भ होता है ।

कृष्ण के नाग कुण्ड में कूदते ही वातावरण में परिवर्तन आता है । बाल सुलभ क्रीडा से उत्पन्न हर्षोल्लास का वातावरण विषाद और भय में बदल जाता है । इस घटना से ग्वाल-बाल तथा नगर निवासियों में जो खलबली मची उसका प्रभावपूर्ण वर्णन निम्नांकित पंक्तियों में देखिए।

जदूनाथ काळी समी वाय जोडै, घणी भोम चाली चढी वात घोडै ।
ऊभा गाय गोवाळ झूरत आरं, हा हा कार हक्कार ससार सारं ।।

यह दुखद समाचार माता यशोदा के कानों में भी पड़ा । इसे सुनते ही माँ के ममता भरे हृदय पर आघात पहुँचा । उसका दिल टूट गया, शारीरिक शक्ति नष्ट हो गई । वह धड़ाम से गिर पड़ी । चतुर सखियाँ घटनास्थल पर माता यशोदा को ले गई । यशोदा में अधिक चलने की शक्ति अब कहाँ थी ? वह तो रास्ते में ही थक गई । कवि ने पुत्र-शोक से विह्वल माता यशोदा के विलाप का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है ।

सुण्यो वात आघात माता सनेही, जसोदा ढळी कद्‌ळी खभ जेही ।
सबाहे सखी लार हाली समाणी, रहावी विचाल थकी नद राणी ।।

× × ×

विहू लोचन नीर धारा बहती, कनयो कनैयो यशोदा कहती ।
कालिंदी तणी आई लोटत काठ, गयो जाणि चिंतामणि एक गाठ ।।

विप्रलंभ या वियोग का काव्य में बड़ा महत्व है । कवियों की आत्मा वियोग वर्णन में खूब रमी है । भक्त कवियों में सूर और जायसी तो अपना सानी नहीं रखते । आधुनिक कवि सुमित्रानंदन पंत भी 'वियोगी होगा पहिला कवि' कह कर वियोग का महत्व बताते हैं । वियोग वर्णन एक ऐसा जंजाल जाल है कि उसमें उलझने के बाद उससे निकलना मुश्किल होता है । सांया झूला सिद्धहस्त कवि हैं । उन्होंने नागदमण रचना में वियोग वर्णन में दो तीन पद ही लिखे हैं । वियोग-वर्णन इस काव्य में चाहे थोड़ा हो, परन्तु जो है वह बहुत ही प्रभावोत्पादक है । कवि की कुशलता इसी में है कि वह वियोग के जंजाल में अधिक न फस कर कथा को बड़े स्वाभाविक ढग से आगे बढ़ाता है । वह यमुना के कछार में खड़े भय त्रस्त माता यशोदा एवं गोप समाज से पाठक का ध्यान तुरन्त हटाकर यमुना में नाग कुण्ड की ओर जाते श्रीकृष्ण की ओर खींच लेता है । कृष्ण यमुना मथन करते हुए नागराज के महल की ओर जाते दिखाई देते हैं । यह देखकर

सारा गोप समाज घबरा जाता है। कृष्ण के माता पिता तथा सभी सखा लौट आने की प्रार्थना करते हैं, परन्तु अत्याचारी कालिय को मारने की उत्कट इच्छा रखने वाले कृष्ण एक भी नहीं सुनते। वे गहरे पानी में बैठ कर नागराज के महल में पहुंच जाते हैं। महल मे नागराज सोया हुआ है। नागरानियां अपने कक्ष में बैठी हैं। कृष्ण को वहां देख उसके अमलस्वरूप पर मुग्ध हो जाती हैं। कृष्ण के लोकरञ्जनकारी रूप चित्रण का इस काव्य में विशिष्ट स्थान है। नाग पत्नियां कृष्ण रूप वर्णन करती हुई कहती हैं कि सुन्दर सलोने श्यामल रूपधारी कृष्ण के कान मुक्ता जटित कर्णाभूषण से सुशोभित हैं। शरीर पर सुगन्धित पीताम्बर ओढ़े हैं। गले में मुक्ताहार, गुञ्जमाल तथा केहरि नख बहुत ही सुन्दर लगते हैं। बाहुओं में बंध मणि युक्त बाजूबंध तथा सुन्दर कीमती रत्नों से जटित मणिबंध नागरानियों की दृष्टि चोर लते हैं। हाथ की अंगुली में पहिनी मुद्रिका उनके चितार्पण का विशेष केन्द्र है। नागरानियों के मुंह से आभूषण वर्णन तत्कालीन सामाजिक वैभव एवं नारी सुलभ आभूषण प्रेम का परिचायक है। आभूषण तो रूप वृद्धि का साधन है। वास्तविक सौन्दर्य तो मनुष्य की आकृति एवं मानसिक गुणों पर निर्भर करता है। कृष्ण धीरोदात्त एवं विरोचित गुणों से तो युक्त हैं ही उनके शारीरिक सौंदर्य का चित्रण निम्नांकित पंक्तियों में देखिए।

इस नासिका सिघ्घ दीपक ऐरी, कली चंप जाणं लळी लप केरी।
नवा नेह दीरघ्घ पक्कज नेत्र सोभा मीन खजन मृगा सहेत्र ॥

कृष्ण के श्याम सलोने रूप पर मुग्ध नागरानियां कृष्ण की उपस्थिति से विभिन्न हैं। कृष्ण के प्रति उनके हृदय मे सहानुभूति जागृत होती है। वे पूछती हैं—अरे तू यहां कहां से आ गया, यहां क्या काम है? क्या तू रास्ता भूलकर सर्प के घर आ गया है? हाय हाय आज यह बकरी बाघ की गुफा मे कहां से चली आई? इस प्रकार नागरानियां बहुत समझाती हैं, डराती हैं परन्तु कृष्ण बिल्कुल ही पथ विचलित नहीं होते। बड़े आत्मविश्वास के साथ वह कहते हैं— मैं कबसे प्रतीक्षा में खड़ा हूं।' हे नागिन! तुम जाओ और जल्दी ही नागराज को जगाओ। आज हम यही अखाड़ा रखेंगे। युद्ध में हार-जीत तो भगवान के हाथ है।

युद्ध वर्णन हिन्दी के आदि-साहित्य की एक बहुत बड़ी विशेषता है। युद्धों का सजीव एवं सांगोपांग चित्रण वीरगाथा काल के अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। भक्त कवि सांया जी ने प्रस्तुत रचना में युद्ध वर्णन को

स्थान दिया है। युद्ध में विजय के महत्त्व का अनुभव कराने हेतु विजित के शौर्य और पराक्रम का दिग्दर्शन कराना नितान्त आवश्यक है। नाग दमण में युद्ध कृष्ण एवं नागराज के बीच हुआ है। कवि ने नागराज के शौर्य का वर्णन नागरानियों के मुंह से ही करवाया है—

इसो आज ते कौण भूलोक आछ,काळी नागसूं जुध्ध सग्राम काछ।
चढे कृ ण काळी तणी सीम चाप,काळी नाग हू आज ही कस काप॥

अपने युग के महापराक्रमी योद्धा कंस को कंपा देने वाले कालिय नाग की भीषणता का वर्णन तो अत्यन्त दर्शनीय है।

जाळ झिल्ल नीला बहे विस्स झाळा,वदन्न सहस्सं वर्षे ध्योम व्याळा।
वडा श्रृ ग सीतग हेमग वाळा, जिरी फूंक आगे भर टूक फाळा॥

इस दुर्जय भयानक नागराज को कौन जगावे? कैसे जगावे? यह गंभीर प्रश्न सभी के सामने खड़ा हो गया। आखिर नागरानी के अनुरोध पर स्वयं कृष्ण ने मुरलीवादन शुरू किया। मुरली का स्वर सप्त पाताल भेदी था, उसका स्वर स्वर्ग देवताओं को भी सुनाई पड़ा। इस महानाद को सुनकर दुष्टों का हृदय कम्पायमान हो उठा। व्रज निवासी इस स्वर से अमृत पान करने लगा। इस महा-भयानक सिन्धु राग को सुनकर अत्यन्त क्रोधित, समस्त फणों को ऊंचा उठाए, फुंकार करते हुए नागराज अपने दरबार में आया और उसने कृष्ण को अपनी पूंछ के घर कोटे में घेर लिया। डक डक करते कालिय ने कृष्ण पर प्रहार करने प्रारम्भ किये। कृष्ण के हाथ कालिय नाग की गरदन के पास थे। वह एक गारुडी की तरह दिखाई देते थे। इस द्वंद्व युद्ध को देखने सारा नाग समाज एकत्रित हो गया। नागरानियां भी वहां उपस्थित थीं। कोई भी भारतीय नारी अपने सामने किसी अन्य पुरुष द्वारा पति को अपमानित होते तथा पीटे जाते हुए नहीं देख सकता। किसी पुरुष को उसकी पत्नी के सामने अपमानित करना उस नारी का निरादर करना है। इसी कारण कृष्ण कालिय को उसके दरबार से बाहर निकालकर यमुना के गहरे पानी में ले गए। वहां श्रीकृष्ण ने अपने प्रहारों से नाग को बुरी तरह घायल किया—

मर्चे मूठ मारा झरै श्रोण झारा, फणारा घणारा करै फूंनकारा॥

इस जबरदस्त मार को सहने की शक्ति कालिय में न रही। वह आर्तनाद कर उठा। श्रीकृष्ण के प्रहारों से वह बेहोश हो गया और छोटी नाव की तरह पानी में तैरने लगा। कालिय एक अत्याचारी नाग था। अत्याचारी के मरने पर सुर, नर आदि सभी को खुशी होती है।

श्रीकृष्ण के हाथ में कालिय नाग का सिर देखकर देवगण भी अपने रथों को रोक कर खड़े हो गए ।

वीर काव्य मे युद्ध-सामग्री का भी बड़ा महत्त्व है। कवि ने कृष्ण, नाग रानी संवाद मे समरोचित सामग्री का भी वर्णन किया है। तत्कालीन युद्ध में हय-दल पदल, हस्तीदल आदि का होना आवश्यक था । इसके अतिरिक्त शरीर रक्षाय बाजूबन्द तथा बख्तर का भी महत्त्व था । अनेकानेक शस्त्रों का प्रयोग उस समय किया जाता था । नीचे की पंक्तियों म कवि ने युद्ध सामग्री मे अनेक शस्त्रास्त्र एवं वाद्यों के नाम बताये हैं ।

फिर डबरी सैन्य नाही फरस्सी कड चोल कट्टार कस्सी न कस्सी ।
टकारी न भारी न अढारटाकी, पापण न बाण न कमाण बाकी ॥
नफेरी न भेरी न निस्साण-नद्दा, रिणतूर बाज न गाज रवद्दा ।

अत उपयुक्त वर्णन के आधार पर यह तो निस्संकोच कहा जा सकता है कि कवि को युद्ध एवं युद्धोचित सामग्री का ज्ञान था । इसके साथ साथ यह कहने मे भी संकोच अनुभव नहीं करना चाहिए कि कवि की आत्मा कृष्ण कालिय द्वद्व युद्ध चित्रण मे अधिक नहीं रमी है । इसका मूल कारण संभवत कवि का भक्त होना है । भक्त कवि इस युद्ध में एक क्षण के लिए भी अपने आराध्यदेव को कष्ट में देखना नहीं चाहता । इसीलिए कालिय के प्रहार कृष्ण को फूल छड़ी की तरह मालूम हो रहे हैं । सायां भूला प्रधानत भक्त कवि हैं । यद्यपि इन्होंने प्रयारम्भ से ही उत्साहपूर्ण वातावरण मे बालकृष्ण के शौर्य एवं पराक्रमपूर्ण कार्यों का चित्रण किया है फिर भी समग्र ग्रंथ का सम्यक अवलोकन करने के बाद इसी निर्णय पर पहुँचते हैं कि शौर्य गान गायक कवि भक्त हृदय पर विजय नहीं पा सका । भक्त कवि ने इस ग्रन्थ मे स्थान स्थान पर बाल कृष्ण पर देवत्व का आरोप किया है । ग्रंथ के प्रारम्भ में ही कृष्ण को प्रभु कहकर संबोधित किया गया है वह दूसरों को जीवन मरण के बंधन से मुक्त कराने वाला है । अवनी भार उतारवा आयो एण जुगति' कहकर कवि ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कृष्ण को अवतार मान लिया है । कवि सामान्यत बालक कृष्ण का वर्णन करते हुए पाठक को एक उत्साही पराक्रमी तथा वाक् चतुर बालक का परिचय देता है । यह परिचय देते देते कवि के अन्तमन में सोयी भक्ति भावना जागृत होती है और अनेक प्रसगों की सृष्टि कर बाल-कृष्ण के ईश्वरत्व की ओर संकेत करता है । कृष्ण के बाल रूप पर मुग्ध होकर नागरानियों ने सहानुभूतिवश कालिय से बचाने के लिए जब कृष्ण को अपने महलों में छिपने के लिए कहा तो

स्वयं श्रीकृष्ण ने निम्नांकित पंक्तियों में अपने आपको विराट् बताया है ।

रहा तो घरै दाव दूज रहावू , मोरो घाट वैराट एथें न मावू ।

कृष्ण पार्थिव रूप में तो मथुरा में रहते हैं परन्तु वास्तव में उनका निवास तो भक्तों के हृदय में है—'अमारा भगता तणा एह मोरा' पंक्तियों द्वारा गीता के इस प्रसिद्ध कथन की याद दिलाई है— 'नाऽहं वसामिवैकुण्ठे भक्त हृदये वसाम्यहम् ।' इसी प्रकार नागराणी संवाद, नागराणियों द्वारा कृष्ण पूजा, नारद द्वारा स्तुति गान आदि अनेक ऐसे प्रसङ्ग कृष्ण के देवत्व की ओर संकेत करते हैं । सारा का सारा ग्रंथ कवि की भक्ति-भावना से भरा पड़ा है ।

प्रकृति चित्रण का काव्य में बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है । कविगण हमेशा से ही प्रकृति की गोद में बैठकर उससे प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं । प्रात , संध्या, सूर्य, चन्द्र, नदी, जंगल, पर्वत आदि अनेक प्राकृतिक उपकरणों के साथ अपना रागात्मक सम्बन्ध स्थापित कर उनके विभिन्न स्वरूपों की अवतारणा काव्यात्मकता के वर्द्धन में सहायक होती है । प्रस्तुत रचना नाग-दमण में कवि के सामने अनेक ऐसे अवसर आये हैं जहाँ वह प्रकृति चित्रण कर सकता था, परन्तु ऐसा नहीं हुआ । प्रातः गोचारण को जाते समय ऊषा काल एवं उगते सूर्य का ग्वाल बाल के खेलते समय जंगल का तथा यमुना नदी का थोड़ा बहुत चित्रण हो जाता तो अच्छा था । ऐसा प्रतीत होता है कि कवि के हृदय में प्राकृतिक सुषमा के प्रति कोई आकर्षण नहीं है । कवि युद्ध सामग्री की परिगणना का अवसर तो नागराणी कृष्ण संवाद की रचना कर प्राप्त कर लेता है, परन्तु प्रकृति चित्रण का सहज स्वाभाविक ढंग से अवसर प्राप्त होते हुए भी काव्य के इस पक्ष की ओर ध्यान नहीं देता ।

भाषा प्रौढ़ता का निश्चय उसका संश्लिष्ट स्वरूप है । थोड़े से शब्दों में भावों को बांधकर रखना भाषा पर पूर्ण अधिकार रखने वाले कवियों का ही काम है । नागदमणकार का भाषा पर पूर्ण अधिकार है । इसी कारण इस काव्य में संवाद सौष्ठव एवं शब्द चित्रों की योजना बड़ी सफलता के साथ बन पड़ी है । 'जसोदा ढूला कढसी राम जेहो' में माता यशोदा की कृपता एवं गिरने का बड़ा सफल चित्रण है । 'लियां लकुटी कथ ऊभा हुलासे' की शब्दावली पढ़ने से आँखों के सामने खेलने को आतुर खिलाड़ियों का चित्र तो खिंचता ही है, परन्तु हुलास शब्द का प्रयोग उनकी मन स्थिति का भी परिचायक है । सूक्ष्म को स्थूल रूप देना आधुनिक युग के छायावादी कवियों की एक विशेषता रही है, परन्तु १७वीं शताब्दी

में ग्रंथकार ने इसका कितनी कुशलता के साथ प्रयोग किया है, यह द्रष्टव्य है—'धणो मोम वाली चढ़ी बात धोड़' में बात को प्रसरण गति का चित्र सा खड़ा हो जाता है। इसी प्रकार 'पड़ी दीतवी आज हो बाघ पान' में कृष्ण की सुकुमारता तथा कालिय नाग की भयानकता का चित्रण है। 'नारी गाठियो सू ठ दूमो न सायो' में भी व्यंग्यात्मक भावों को बड़ी कुशलता के साथ बांधा गया है। 'हरी हो हरी हो हरी धेन हाक' में गौओं को हाकने का दृश्य उपस्थित करने में तो कवि ने कमाल दिखाया है। इसके अतिरिक्त सवाद रचना में भी कवि को बड़ी सफलता मिली है। नीचे की पंक्तियों में नागरानी और कृष्ण के बीच प्रश्नोत्तर की छटा देखिए—

कठा हूँत आयो अठ काज केहा, ग्रहा भूलियौ वापरो साप गेहा।

कृष्ण उत्तर देते हैं—

भलो नागणी नाकियो राह भूलो, देवो आपरी लाज लीधो दकूलो॥

आगे फिर कृष्ण कहते हैं—

खटूकै मु है नागणी वात खारो, प्रभू जागसी मूझ पाछा पधारो।

नागिन फिर कृष्ण को समझाती है—

काळी नाग सू लीजिए वेगि कानो, पड्यो तात सोक्षै चढै मात पानो।

इस प्रकार छद स० ३० से लेकर छद स० ९३ तक में सवादों की छटा भरी पड़ी है। एक ही पद में प्रश्न उत्तर, प्रत्युत्तर का समा-सा बध जाता है। यह सब भाषा पर अमित अधिकार होने से ही सम्भव हो सकता है।

चित्रोपमता भी इस काव्य की अपनी विशेषता है। इस काव्य का प्रारम्भ भी भगवच्चरण के पश्चात शब्दचित्र से ही होता है। नीचे की पंक्तियों में माता यशोदा द्वारा कृष्ण को जगाने, दधिमथन करने, तथा मक्खन मांगने जैसी अनेक क्रियाओं का चित्रण देखने योग्य है।

विहाणू हवो गाय जागी वहल्ला, हुयो दोहिवा धेनु गोवाळ हेला।
जगाड जसोदा यदुनाथ जागे, मही माट धूम, नवनीत मागे॥

अपने घर से प्रात काल गौओं को निकालकर चौगान में लाना और उन्हें चराकर लाने के लिए ग्वाले को सौंप देना ग्राम्य जीवन की दैनिक प्रक्रिया है। कवि ने इसका बहुत ही सजीव एवं मनोरम चित्र खींचा है।

हरी हो हरी हो हरी धेन हाकै, झरोखा चढो नदकुमार झाकै।
अहिराणिया अदला भूल आवै, भगवान न धेन गाय्या भळावै॥

इकी-वेवटी चोवटै आय ऊभी, सभाली लियो स्याम मोरी मुरली।
हुई नद री धेन सू धेन हेरा, भिळ वाळवा जाणि भी गग भेळा ।।

नाग दमण डिंगल भाषा को रचना है। इटली के सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक राजस्थानी भाषा के अनन्य प्रेमी डॉ० तैस्सितोरी ने इस भाषा को अनियमित, गवारू तथा साहित्यशास्त्र का अनुसरण न करने वाली भाषा कहा था। नाग दमण में डिंगल के इस स्वरूप को देखने से उपयुक्त सभी आपत्तियों का निवारण होता है। विद्वान सम्पादक ने इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में इस भाषा का व्याकरण भी दिया है। प्रस्तुत रचना में डिंगल भाषा का स्वरूप बहुत ही प्रौढ़, नियमित, शिष्ट एवं व्याकरण शास्त्र-सम्मत है।

भुजंग प्रयात छंद का प्रयोग संस्कृत काव्य में बड़ी प्रचुरता के साथ मिलता है। हिन्दी कविता ने इस छन्द को वहीं से प्राप्त किया है। डिंगल भाषा के कवियों ने संस्कृत के सभी वर्ण वृत्तों को अपनाया है फिर भी उनका सर्वाधिक झुकाव भुजंगप्रयात की ओर ही रहा है। इसका कारण इस छन्द का गति वैशिष्ट्य है। सायां जी ने इस छन्द का प्रयोग अपने इस ग्रंथ में प्रारम्भ से लेकर अंत तक बड़ी कुशलता के साथ किया है।

डिंगल के प्रसिद्ध अलंकार वयणसगाई का निर्वाह करना कोई सरल काम नहीं है। यह तो सिद्धहस्त कवियों से ही सम्भव हो सकता है। क्योंकि इसमें भाषा, छन्द, अलंकार तीनों पर समान रूप से अधिकार होना चाहिए। नागदमण में इसका सुन्दर निर्वाह हुआ है। उदाहरणार्थ निम्नांकित पद को देखिए—

मड्यो दूसरो खेल खेलत माय हिव ऊतरी वात गोवाळ हाय।
करै भीन सहो नमतेय काना, आवै धेन धद्धीव काठ जमूना।

उपयुक्त छन्द के प्रत्येक चरण के प्रथम शब्द तथा अंतिम शब्द का प्रारम्भ एक ही वर्ण से होता है। इस वर्ण-मैत्री को ही डिंगल कवि वयण सगाई कहते हैं। देखने से यह अनुप्रास का ही एक भेद मालूम होता है। इसके अतिरिक्त उपमा उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग भी बड़े सुन्दर ढंग से किया है।

सारांशत नागदमण गौ-सरक्षण का सन्देश वाहक, भाषा सारल्य, संश्लिष्ट भाषा शैली, चित्रोपमता मधुर संगीतात्मक छटा एवं नाद-सौंदय से विभूषित डिंगल भाषा का भक्ति भावना से पुरित एक सरस पवाड़ा काव्य है।

हिन्दी भाषा में साहित्य सृजन का प्रारम्भ सं० ७०० से शुरू हो

गया था । इस १२०० वर्ष की लम्बी अवधि में भाषा स्वरूप में अनेक परिवर्तन हुए हैं । डिंगल और पिंगल ये दोनों हिन्दी भाषा के आदि स्वरूप ही हैं । इस दीर्घकाल में नाग दमण जैसे अनेक प्रौढ़ काव्य लिखे गए होंगे । उनमें से उचित ध्यान न दिए जाने के कारण अनेक रचनायें अतीत के गर्भ में दबी पड़ी हैं । इन ग्रन्थों को खोजकर साहित्य संसार के सामने लाना साहित्यवेत्ता तथा माँ सरस्वती की सर्वोत्तम पूजा है । लग भग साढ़े तीन सौ साल पुरानी सांया जी कृत 'नाग दमण' जैसी प्रौढ़ एवं सरस रचना को सटीक सम्पादन के साथ साहित्यानुरागियों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास स्तुत्य एवं अनुकरणीय है । इस सु प्रयास के लिए विद्वान सम्पादक श्री मूलचन्द जी 'प्राणेश' एवं रा० वि० म शोध प्रतिष्ठान बधाई के पात्र हैं ।

प्रिंसिपल
राजस्थान बाल भारती,
बीकानेर

रामेश्वर प्रसाद पाडिया
एम० ए०, बी० एड०

खंड १

झूला सांयाजी

कृत

नागदमण

आलोचनात्मक अध्ययन

झूला सांयाजी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

राजस्थानी कृष्ण भक्ति साहित्य में झूला सांयाजी का विशिष्ट स्थान है। ये सफल कवि होने के साथ साथ भगवान कृष्ण के अनन्य भक्त भी थे। इसी कारण से इनकी कृतियों में आत्म प्रचार भावना का सर्वथा अभाव पाया जाता है। अतः साक्ष्य के आधार पर केवल स्वयं के नाम[1] तथा स्वयं के गुरुवर्य श्री गोविन्ददासजी के नाम[2] के अतिरिक्त जीवन संबंधी कुछ भी सामग्री नहीं मिलती। बहिःसाक्ष्यस्वरूप सम्बन्धित ऐतिहासिक ग्रंथों से अथवा प्रचलित अनुश्रुतियों में कुछ सामग्री उपलब्ध होती है, उसी के आधार पर निम्नांकित पंक्तियों में भक्त कवि की जीवन झांकी प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

जन्म और वंश-परिचय —

भक्तवर झूला सांयाजी का जन्म चारण कुल की झूला नामक शाखा के अंतर्गत वि० सं० १६३२ भाद्रपद कृष्णा ९मी के दिन लीलछा नामक ग्राम में हुआ।[3] इनके पिता का नाम झूला स्वामीदासजी था। स्वामीदासजी लीलछा नामक ग्राम के जागीरदार थे। यह ग्राम गुजरेश्वर सोलंकी राजा सिद्धराज जयसिंहजी की ओर से इनके पूर्वजों को मिला था।[4]

---

[1] (अ) समवाद कालीनाग वह मारो
चवै दास सायांजु सांयो चितारी। —नागदमण छं० १२१

(आ) शरण लीधो जिही निमोह्न को छठ करी,
सादर राखियो स्याम मन सुन्दरी। —रुक्मिणी हरण छं० २०३

[2] गोविन्ददासरी आसौ जन्म गायो। —नागदमण छं० १२१

[3] लीलछा नामक ग्राम गुजरात प्रान्त के प्रसिद्ध नगर ईडर से १२ मील पूर्व की ओर इन्द्रासी नामक नदी के तट पर स्थित है।

[4] श्री हमीरदान —नागदमण (सायांजी की जीवनी) पृ० १

बाल्यकाल एवं भक्ति संस्कार

सांयाजी बाल्यकाल से ही होनहार प्रतीत होते थे। इनके पिता शैव थे इसी कारण से वे भी नित्य प्रति भुवनेश्वर महादेव के दर्शनार्थ जाते थे और भगवान भोलेनाथ की पूजा अर्चा किया करते थे। अनुश्रुति है कि—भगवान महादेव ने इनकी श्रद्धा एवं भक्ति से प्रसन्न होकर योगी के रूप में सांयाजी को दर्शन दिया था।

विद्याध्ययन—अभिरुचि तथा गुरु

पिता की मृत्यु के उपरांत सांयाजी ने ईडर आकर विद्याध्ययन करने का संकल्प किया। एक दिन जब वे ईडर की ओर आ रहे थे तब सौभाग्य से इनकी भेंट सुलेमान नामक मुसलमान जमादार से हो गई। वह सांयाजी के व्यक्तित्व से बहुत ही प्रभावित हुआ तथा अपने साथ इन्हें ईडर ले गया और एक ब्राह्मण के घर इनके खाने पीने एवं रहने का प्रबन्ध कर दिया।

महात्मा हरिदासजी के शिष्य महात्मा गोविन्ददासजी इन दिनों ईडर में निवास करते थे। इनकी ख्याति से प्रभावित होकर सांयाजी ने गोविन्ददासजी का शिष्यत्व ग्रहण करने का निश्चय किया। एक दिन अवसर देखकर इन्होंने म० गोविन्ददासजी के समक्ष अपना विचार प्रकट किया। इन्होंने सांयाजी की उत्कट अभिलाषा को देखकर यथोचित विधि से दीक्षा प्रदान की एवं नियमित रूप से शास्त्रीय ग्रन्थों के साथ-साथ श्री भागवतादि पुराणों का अध्ययन करवाने लगे।

राज्याश्रय एवं राज्यसम्मान

इन दिनों ईडर पर राठौर राव वीरमदेवजी का शासन था।[1] राव वीरमदेवजी (१६३५-१६५३ वि०) प्रत्येक पूर्णिमा की रात्रि में स्वयं से सम्बन्धित कीर्ति काव्य सुनाने वाले को लाखपसाव[2] दिया करते थे। एक समय आलोजी नामक चारण ईडर आये हुए थे। राव वीरमदेवजी ने सदा की भांति लाखपसाव की तैयारी करके आलोजी को बुलवाया। आलोजी तथा राव वीरमदेवजी के परस्पर तकरार हो जाने के कारण आलोजी को लाख

---

[1] ईडर राज्यना इतिहास पृ० १६८

[2] राजस्थान में शासकों की ओर से कवि तथा याचकों को लाखपसाव, करोड़पसाव और अरबपसाव के रूप में क्रमशः इतनी ही सम्पत्ति भेंट करने का प्रचलन था, परन्तु बाद में इन पसावों का एक बंधी बंधाई परिपाटी के अनुसार मरण (पूर्ति) कर दिया जाता था।

पसाव नहीं दिया जा सका। राव वीरमदेवजी ने तत्काल किसी अन्य कवि को लाने का आदेश दिया। जमादार सुलेमान उचित अवसर पाकर सायाजी को बुला लाया। सायाजी की विलक्षण प्रतिभा देखकर राव वीरमदेवजी आश्चर्यान्वित हुए तथा उक्त लाखपसाव के साथ साथ रेहड़ा नामक ग्राम देकर विशेष सम्मानित किया। साथ ही ईडर में इनका तम्बू बंधवा कर राज्याश्रय भी प्रदान किया। राव वीरमदेवजी इन्हें समय समय पर और भी अनेक प्रकार के दान देकर सम्मानित करते रहते थे जिनमें चवालीस हजार के मूल्य का भालाहर नामक घोड़ा तथा रायपुर से लौटते समय एक हाथी और लाखपसाव का दिया जाना अधिक प्रसिद्ध है।[1]

राव वीरमदेवजी की मृत्यु के उपरान्त इनके लघु भ्राता राव कल्याणमलजी ईडर के शासक बने। ये भी राव वीरमदेवजी की तरह भक्तवर सायाजी को अपार श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। एक बार राव कल्याणमलजी स्वयं छोटी सवारी से लीलछा पधारे थे।[2] इन्होंने भी राव वीरमदेवजी की तरह वि० सं० १६६१ में झूला सायाजी को लाखपसाव तथा कुवावा नामक ग्राम शासन में देकर विशेष सम्मानित किया था।

भक्तवर झूला सायाजी का भी राव कल्याणमलजी के प्रति अपार स्नेह था। उनके वनवास के समय रावजी को लिखे गये गीतात्मक पत्र के द्वारा ऐसा स्पष्ट ध्वनित होता है। यथा —

गीत सायाजी झूला रो कह्योडो
॥ प्रथम दूहो ॥

मन धारे मळवाह, एचे आवाय नहीं।
आडा ईडरियाह, काकट घणा किल्याणमल ॥१॥

॥ गीत ॥

आस सुर हो सदेश अमोणो,
व्रज आया किम बळियै।
माम तिया सेहर सामळिया,
मळै तो मथुरा मळियै ॥१॥

---

[1] फार्बस कृत रासमाला का गुजराती अनुवाद पृ० ६६४

[2] राजस्थान के शासक जब किसी व्यक्ति का विशेष रूप से सम्मानित करके दरबार में बुलाते थे तब वे स्वयं सम्मानित व्यक्ति से छोटी सवारी (वाहन) पर बैठ कर उसके पीछे पीछे चलते थे जिसे छोटी सवारी कहा जाता था।

आज रहो अठ माई अणगम,
दरम्म रहो माई दरिया।
मोन रव मत राय माम्,
एकाग ईडरिया ॥२॥

रयण गमाणम (ठारठ अठ रय)
प्रथमी अरज पयाणा।
धर भेटवा तणी गोवरधन,
महुजा घर निल्याणा ॥३॥

शोध प्रतिष्ठान—स्फुट साहित्य संग्रह पृ० १५३

इस गीतात्मक पत्र के प्राप्त होने पर राव कल्याणमलजी ने अविलम्ब ईडर से मथुरा की ओर प्रस्थान कर दिया था, परन्तु मथुरा पहुंचने से पूर्व ही सांयाजी के गोलोकगमन की दुःखद सूचना इन्हें मिल जाने के कारण वे मार्ग से जाकर ईडर लौट गए।[1] यह घटना वि० सं० १७०३ के श्रावण सुदी २ के प्रात काल में घटित हुई मानी जाती है।[2]

रासमाला में उक्त घटना का काशी से एक पड़ाव की दूरी पर घटित होना बताया गया है।[3] जिसका आधार सम्भवतः गीतात्मक पत्र के द्वितीय द्वाले का अशुद्ध पाठ रहा है। जिसमें—'गंग-स्नान करण गाडीगुर, आवै जो ईडरिया' पाठ से गंगा या काशी में होना सम्भावित मानकर उक्त घटना का काशी के निकट होना मान लिया गया है। परन्तु रा० वि० प० शोध प्रतिष्ठान द्वारा संकलित हस्तलिखित सामग्री के अन्तर्गत जो गीतात्मक पत्र प्राप्त हुआ है उसमें उक्त पाठ नहीं है तथा होना भी नहीं चाहिए। क्योंकि डिंगल के छोटे साणोर गीत की यह एक विशेषता रही है कि—प्रथम द्वाले में वर्णित भाव को ही अग्रिम द्वालों में शब्द भेद से परिपुष्ट किया जाता है। प्रतिष्ठान के संकलन द्वारा प्राप्त गीत में यह विशेषता उपलब्ध है अतः इसका पाठ अधिक विश्वास करने योग्य है। इस गीतात्मक पत्र में कवि सांयाजी ने राव वीरमदेवजी को मथुरा ही बुलवाया है। क्योंकि ब्रजवास करने के उपरांत किस प्रकार अन्य स्थान को जाया जाए? इसलिए गोवर्धनधारी को घर पर भेंटने के लिए ही मारू राव से प्रार्थना की गई है।

---

[1]श्री हमीरदान — नागदमण (सांयाजी की जीवनी) पृ० ४६
[2]श्री मोतीलाल मेनारिया — राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १७८–१७६
[3]फार्बस कृत रासमाला (गुजराती अनुवाद) पृ० ६७७

अत काशी के पास उक्त घटना के घटित होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

जनमानस पर सायाजी का प्रभाव

भक्त कवि मूला सांयाजी सदगृहस्थ होते हुए भी अपने जीवन काल में चमत्कारी संत माने जाते थे। इनके द्वारा गाय पर झपटते हुए बाघ को श्रापित करके गधा बना देना, ईडर के सरोवर पर स्नान करते समय एक मगर को अंजुलिदान द्वारा यक्ष का स्वरूप प्रदान कर देना, द्वारिका स्थित रणछोड जी के वस्त्रों में लगी हुई अग्नि को ईडर के दरबार में बठे बठे बुझा देना इत्यादि चमत्कारपूर्ण अनुश्रुतियां उनकी लोकप्रियता के प्रबल प्रमाण हैं। इतना ही नहीं एक डिंगल कवि तो मूला सायांजी को भगवान से भी बढ कर मानता है तथा उनकी पूजा-अर्चा मे ही अपना कल्याण मानता है। यथा —

गीत साया झूलारो

पावन मन तिसो भगता पण,
मेहडो सकव थयै उदार।
साइयो एकण वार साभळै,
हर साभळै वार हजार ॥1॥

मामा मोह न लागो जे मन,
गढवी तूझ लगो हर ग्यान।
लीधा भागवत चै (?) लाधै,
सहस नाम फळ एक समान ॥२॥

मूला राव इसो नित झीलै,
किसन गगजळ समोकरि।
वर दीधो एह्वो लिखमीवर,
भगत सहुवं साख भरि ॥३॥

तू गोकळ घर रहे निरन्तर,
रिदै तूझ चरण हू रीत।
गायस तू गढवी त्रभुवण गुण,
गायस हू थारा गुण गीत ॥४॥

शोध प्रतिष्ठान— स्फुट साहित्य सग्रह पृ० १६२

मूला सायाजी की रचनाए

मूला सायाजी की कौ चार स्फुट पद्य रचनाओं के अतिरिक्त केवल

दो काव्य ग्रन्थ उपलब्ध हैं—नागदमण और रुक्मिणीहरण। उक्त दोनों काव्य भगवान कृष्ण की पावन लीला से संबंधित हैं। भाव भाषा और शैली-गत सभी विशेषताओं के रहते हुए भी रचनाकाल के उल्लेख का अभाव खटकता है। पालणपुर निवासी राव कवि लखपीरात्मज हमीरदानजी ने स्वसम्पादित नागदमण में रुक्मिणीहरण और नागदमण का रचनाकाल राव वीरमदेव जी के देहावसान के उपरांत राव कल्याणमल जी के द्वारा प्रदत्त लाखपसाव से पूर्व माना है।[1] राव वीरमदेव जी का देहावसान विक्रमी संवत १६५३ में हुआ था और राव कल्याणमल जी द्वारा सांयाजी को वि०सं० १६६१ में लाख पसाव दिए जाने की मान्यता है।[2] इस मान्यता के आधार पर [१६५३ से १६६१ वि० तक] आठ वर्ष का रचनाकाल ठहरता है। रुक्मिणीहरण की भाषा शैली को देखते हुए तो उक्त काल को ठीक कहा जा सकता है, पर नागदमण की शैलीगत प्रौढ़ता देखते हुए, उचित प्रतीत नहीं होता। कारण कि—उक्त रचनाकाल के समय झूला सांयाजी की आयु [जन्म १६३२ वि०] केवल २१ वर्ष की थी। इतनी अल्प वय में नागदमण जैसी प्रौढ़ रचना का रचा जाना संदेहास्पद है तथा आगे के जीवनकाल [मृत्यु १७०३ वि०] में हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना कम आश्चर्यजनक नहीं है। नागदमण का सृजनकाल रुक्मिणीहरण के साथ मानने के पीछे उसको अकबर के दरबार में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति रही हो तो भी कोई अत्युक्ति न होगी। प्राचीन शास्त्रकार परीक्षा[3] के अनुरूप मध्य युग के कवियों में यह भावना पाई जाती है कि—वे भी अपनी रचनाओं को तत्कालीन शासक के सम्मुख प्रस्तुत करके उन पर सम्मति प्राप्त करें।

साहित्य जगत में प्रचलित यह प्रवाद—यह [रुक्मिणीहरण] और वेलि दोनों ग्रन्थ एक साथ बादशाह अकबर को निरीक्षणार्थ भेजे गये। बादशाह ने पहले वेलि को सुन कर हरण को सुना। अन्त में हरण की रचना को श्रेष्ठतर निर्णीत करके श्लेष और व्यंग्य में पृथ्वीराज से कहा—"पृथ्वीराज तुम्हारी वेलि को चारण बाबा की हरिणिया चर गई।"[4] भी परीक्षणीय है।

---

[1]श्री हमीरदान—नागदमण [सांयाजी की जीवनी] पृ० २५

[2]श्री माहेश्वरी—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १७३

[3]श्रूयते च पाटलि पुत्रे शास्त्रकार परीक्षा। अत्रोपवर्ष वर्षाविह पाणिनि : पिंगला-विह व्याडि वररुचि पतंजलो इह परीक्षिताख्यातिमु जग्मु।

राजशेखर—काव्य मीमांसा

[4]डा० आनन्दप्रकाश दीक्षित—वेलि क्रिसन रुकमणी री भूमिका पृ०२५

बादशाह अकबर का जीवनकाल १६,२ वि० तक माना गया है। बेलि के रचयिता राठौर पृथ्वीराज जी १६५७ वि० मे बकुण्ठवासी हुए। उक्त प्रथार म बादशाह अकबर बेलिकार की उपस्थिति म अपना निणय देते हैं। इस स सिद्ध होता है कि—उक्त घटना १६५७ वि० से पूव की है। मूला सायाजी [जम १६३२] की आयु २१ २५ वष और राठौर पृथ्वीराज [जम १६०६] की आयु ५१ वष ठहरती है। बादशाह अकबर जैसा साहित्यमम एव व्यवहारकुशल शासक एक प्रतिष्ठित प्रौढ़ साहित्यकार एव अतरग मित्र की तुलना म एक नवोदित युवा कवि को बाबा सम्बोधित करे, यह कुछ अटपटा सा लगता है, जबकि मूला सायाजी कोई साधु सन्यासी न हो कर एक सदगृहस्थ युवक थे।

मूला सायाजी कृत रुक्मिणीहरण का काव्यसौष्ठव भी एक विवादात्मक प्रश्न है। राजस्थानी साहित्य क ममज्ञ प० श्री मोतीलाल जी मेनारिया तथा श्री सीताराम जी लालस नागदमण की तुलना म रुक्मिणी हरण को एक साधारण श्रेणी का वणनात्मक ग्रन्थ मानते हैं, जिसम काव्यत्व का कहीं पता भी नहीं है।[1] इधर श्री पुरुषोत्तमजी मेनारिया स्वसपादित रुक्मिणीहरण की प्रस्तावना म—ग्रन्थ भण्डारो म सायाजी कृत रुक्मिणी हरण की प्रतियां बहुत कम मिलती हैं अत आलोचकों की धारणाए स्पष्ट न हो सकीं—कारण बताते हुए "कवि को दोना कृतियों म समान रूप से सफलता प्राप्त हुई है" मानते है।[2] वस्तुत स्थिति ऐसी नहीं है। रुक्मिणी हरण कवि क युवाकाल की सवप्रथम रचना है तथा नागदमण प्रौढ़काल की। अतएव यदि रुक्मिणीहरण मे नागदमण की सी सजीव एव परिपुष्ट शली का अभाव पाया जाता है तो यह उपक्षणीय नहीं, उचित ही है।

नागदमण की सजीव—चित्रात्मक शली ने परवर्ती ... पर्याप्त मात्रा म प्रभावित किया है। अनेक चारण तथा भाट ... कवियों ने अपने काव्य ग्रन्थों मे नागदमण क छन्दों को थोड़े ... साथ अपना लिया है। सब से बड़ी लोकप्रियता का ... कल्याणदास का नागदमन है।[3] इस ग्रन्थ मे कवि, मूला सायाजी कृत

---

[1][अ] श्री मोती लाल मनारिया —रा० भा० और साहित्य पृ० १३२
[आ] श्री सीताराम लालस—राजस्थानी-सबदकोस भाग १ भूमिका

[2]प्रकाशक—प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर पृ० १४४

[3]श्री मानदान बारठ, श्रीमनगरी द्वारा हरिरस क साथ प्रकाशित

नागदमण के विशिष्ट कलात्मक शब्द विन्यासों को स्वीकार करते हुए उसी छंद और उसी परिमाण का काव्य अपने नाम से प्रचारित करने का लोभ संवरण नहीं कर सका है। उदाहरणार्थ कतिपय छंदों का अवलोकन कीजिए —

सझ चंद्रिका चंद्रिका सीस तार्क,
जरी को दुपट्टो झल्कार झगार।
जडी लालर मूंदड़ी रूप पुंजा,
गलै दूहलडी तिल्लडी हार गुंजा ॥४॥

मिलाइये छ० स० २६

हुका किलक्का ग्वाल हुल्ले बहुला,
हुव मात गादावरी गंग हुला॥
× × ×
भले नदर धेनवा बाग टोळा,
हुले सिंधु ज्या नीर लेतो हिलाळा ॥१०-११॥

मिलाइये छ० स० ६-७

उतसी छटा रूप वसी अधारो,
प्रभू फूटरा स्याम पाछा पधारो।
अडे अंतरी पत हूंता अरोडो,
जदूनाथ थारे किसो नाग जोडो ॥३२॥

मिलाइये छ० स० ३४-४०
इत्यादि

नागदमण का कथा-स्रोत तथा कवि की मौलिक उद्भावना

नागदमण भगवान श्रीकृष्ण की बाललीला से सम्बन्धित एक चरित काव्य है। कालिय दमन का वृत्तांत—महाभारत (सभा ३८), हरिवंश (२ १२), ब्रह्म पुराण (१८५), श्री मद्भागवत (१० १६) इत्यादि पौराणिक ग्रन्थों में उपलब्ध है। इन सब में श्री मद्भागवतमहापुराणोक्त कालिय दमन लीला सुविस्तृत रूप से वर्णित है। यही प्रस्तुत नागदमण का कथा स्रोत है। इसी बहु प्रचलित कथा को मूला सायाजी ने अपनी काव्य प्रतिभा का मधुर व कर मौलिक स्वरूप प्रदान किया है। भगवान श्रीकृष्ण तथा कालिय नाग इस आख्यान के विशिष्ट पात्र हैं। अपेक्षित विवेचन से पूर्व इन दोनों पर संक्षिप्त प्रकाश डालना अप्रासंगिक न होगा।

भगवान श्रीकृष्ण

भारतीय साहित्य में कृष्ण का स्थान महत्त्वपूर्ण है। कृष्ण के चरित का विस्तारक्षेत्र व्यापक है।[1] यद्यपि वेदों में वासुदेव कृष्ण की चर्चा नहीं है, पर अवतारों में सब से पहले उन्हीं की पूजा होने लगी थी।[2] ईसा से कम से कम चार सौ वर्ष पहले वासुदेव की पूजा चल पड़ी थी। धीरे धीरे वासुदेव और नारायण को एक ही समझा जाने लगा था।[3] सनातन नारायण के चार अवतारों में एक अवतार कृष्ण भी प्रमुख है।[4]

विद्वान लोग कृष्ण के स्वरूप की प्राचीनता और व्यापकता में सन्देह प्रकट करते हैं। विंटरनित्स पाण्डवों के सलाहकार कृष्ण, पौराणिक कृष्ण, गीता के उपदेशक कृष्ण को विभिन्न व्यक्ति मानते हैं। भारतीय विचारधारा

[1] श्रीमती पाण्डे— हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन पृ० ८

[2] श्री भारण— वल्लभिया सम्प्रदाय पृ० ७

[3] श्री द्विवेदी— सूर साहित्य पृ० १

[4] महाभारत— १२ ३२१, ८ १०

पाश्चात्य विद्वानों के इस सन्देह को महत्त्व नहीं देती। इस विचारधारा के अनुसार कृष्ण के अनेक स्वरूपों का समावेश एक कृष्ण में हुआ है। प्रारम्भिक पुराणों में कृष्ण का अंशावतार, उत्तर कालीन पुराणों में सोलह कला से युक्त पूर्णावतार हो गया है। कृष्ण चरित्र के विभिन्न स्वरूपों का समन्वय ही उत्तर काल में उनके पूर्णावतार को जन्म देता है।[1]

भागवमण का सम्ब■ बालकृष्ण या गोपालकृष्ण से है। गोपालकृष्ण सम्बधी कथाओं का वर्णन हरिवंश और वायुपुराण में उपलब्ध होता है। भागवत पुराण में कंस वध, पूतना तथा अन्य राक्षसों का वध आदि कथाओं का विस्तृत वर्णन है। इनमें कंसारि कृष्ण और गोपालकृष्ण को अभिन्न समझा गया है। इन ग्रंथों के बनने के समय निश्चय ही गोपालकृष्ण की कथा खूब प्रचारित हो गई होगी। महाभारत के ही सभापर्व (अ०४१) में शिशुपाल के मुंह से ऐसी बातें कहलाई गई हैं जिनमें कृष्ण की गोकुल वाली कथा का आभास पाया जाता है।[2] डा० भण्डारकर का अभिमत इससे भिन्न है। उनके अनुसार कृष्ण आभीर नामक एक घुमक्कड़ जाति के बाल देवता हैं। ये (आभीर) ही सम्भवतः बाल देवता की जन्मकथा और पूजा तथा उनके पश्चात् पिता का उनके विषय में यह अज्ञान कि वह उनके पिता हैं, और निरपराधों के वध की कथा अपने साथ ले आये।[3] यह बालकृष्ण की कथा ईसामसीह की कथा का (ही) भारतीय रूप है।[4] केनेडी, ग्रियर्सन, वेबर आदि विद्वान भी भण्डारकर के अभिमत से सहमत हैं।

डा० भण्डारकर, केनेडी तथा वेबर का मत समीचीन नहीं प्रतीत होता। बालकृष्ण की भक्ति भारत के लिए विदेशी वस्तु नहीं है। रे चौधरी सुदूर वेदों के अन्तर्गत विष्णु के नटखट स्वरूप में बालकृष्ण के बीज की उपस्थिति बतलाते हैं।[5] कीथ ने भी बालकृष्ण की कथा को ईस्वी सन से पूर्व का होना सम्भव बताया है।[6] आभीर इसी देश की पुरानी जाति हो सकती है उनके अपने बाल देवता भी हो सकते हैं। श्री कुमारस्वामी ने कहा है कि—आभीर शब्द द्रविड भाषा का है जिसका अर्थ होता है गो पाल। यह कहा जा सकता है और कहा

---

[1]श्रीमती पाट—हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन पृ० १२ १३

[2]श्री द्विवेदी—सूर साहित्य पृ० ४

[3]वैष्णविज्म शैविज्म एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम्स पृ० ३६ ३७

[4]वही पृ० ३८ ४६

[5]श्रीमती पाड—हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन पृ० १३

[6]ज० रा० ए० सो० सन् १६०७

भी गया है कि—आभीरों (अहीर, जाट, और गुजरों) की मुखाकृति, शरीर गठन आदि, द्रविड नहीं बल्कि सीथियन है। केनेडी इन्हें सीथियन मानते भी हैं। पर इससे उक्त अनुमान में कोई बाधा नहीं पड़ती। हो सकता है कि—आभीर नाम की कोई द्रविड जाति जिसका धर्म भक्ति प्रधान हो और देवता बालकृष्ण हों, पहले से ही इस देश में रहती हो, बाद को ये सीथियन जातियां आकर इनका धर्म ग्रहण करके अपने को आभीर कहने लगी हों। आभीर शब्द का द्रविड होना और देवता कृष्ण (काला) होना इस अनुमान का सहायक होना बताया जा सकता है। यह बात ऐतिहासिकों के ऊहापोह का विषय बनी हुई है कि बाहर से आई हुई कितनी ही जातियां ब्राह्मण धर्म में शरण न पा सकी थीं।[1]

नारद पंचरात्र में बालकृष्ण की महिमा का उल्लेख मिलता है। आनामृत सार संहिता के अनुसार नारद कृष्ण माहात्म्य सुनने के लिए कैलाश पर शिव के पास जाते हैं, वहां उनके महल के सात फाटकों पर—यमुना, कदंब पर श्रीकृष्ण वस्त्र हरण, नग्न गोपिकाएं आदि लीलाएं चित्रित थीं। इस कथा के अनुसार चित्रित एक स्तम्भ जोधपुर के निकट मण्डोवर ग्राम में पाया गया है।[2] भण्डारकर के कथनानुसार इस का काल ईस्वी सन की चौथी शताब्दी से पहले नहीं हो सकता।[3] फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि चौथी शताब्दी तक कृष्ण की लीलाएं भारत में खूब प्रख्यात हो गई थीं।

कालिय नाग

भगवान श्रीकृष्ण के प्रतिद्वंद्वी कालिय का चित्रण एक भयंकर सर्प के रूप में हुआ है। कालिय क्रुद्ध होकर अपने सहस्र फनों द्वारा भगवान पर आक्रमण करता है तथा पूंछ की लपेट से उन्हें घेर लेता है। भगवान श्रीकृष्ण अपने पराक्रम से नागपाश से मुक्त होकर प्रत्याक्रमण स्वरूप उसके फनों पर चढ़ कर उन्हें कुचल देते हैं। वह हजार फनों द्वारा रक्त वमन करने लगता है। नागपत्नियां उसकी मुक्ति के लिए भगवान की स्तुति करती हैं। कालिय के लिए—महाकाल, पन्नग, भुजग, सर्प, अहि, अहिराज, फणिधर इत्यादि संज्ञा एवं विशेषणों का व्यवहार हुआ है।

कुछ विद्वान उपर्युक्त घटना का प्रतीकात्मक अर्थ करते हैं। नाग

---

[1] श्री द्विवेदी—सूर साहित्य पृ० ६

[2] आर्केलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, वार्षिक विवरण १९०५

[3] वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रिलिजस सिस्टम्स पृ० १४४२

को काल का प्रतीक माना गया है।[1] गति और स्थिति, शानेच्छा क्रियात्मक विभु की क्रियाशक्ति के दो प्रधान रूप हैं। गत्यात्मक शक्ति का नाम काल है। यह स्वयं गतिशील रहता है और सृष्टि में किसी को स्थिर नहीं रहने देता। सब को विकास द्वारा, परिणति या परिपक्वावस्था में पहुंचा कर उन्हें समेट लेता है। इसकी क्रिया का यही स्वभाव है। इसलिए सारी सृष्टि विवश हो कर इसके वश में पड़ी हुई है और इसकी निरपेक्ष क्रिया-शीलता से ग्रस्त रहती है। क्योंकि अपनी अबाधगति में यह छोटे बड़े और अच्छे-बुरे का विचार नहीं करता। इसके चक्कर में या लपेट में सारी सृष्टि पड़ी हुई है।" समस्त शक्तियों का उद्गम और आश्रय परमात्मा है। भगवान कृष्ण उसी परमात्मा के पूर्ण अवतार माने जाते हैं। अतएव काल सामान्य जीवात्माओं की तरह ही भगवान कृष्ण को वेष्टित करता है, परन्तु वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पाता पराजित हो जाता है।

कालिय के प्रतीकात्मक पक्ष के अतिरिक्त व्यावहारिक पक्ष भी उल्लेखनीय है। इस पक्ष के अनुसार कालिय, नागराज है। उसके पत्नियां, दास, दासियां तथा प्रजा है। वह एक महल में निवास करता है। इन सब पर ध्यान देने से नाग संस्कृति की ओर दृष्टि जाती है। आर्यों के आगमन से पूर्व भारत में नाग और सुपर्ण इत्यादि आर्येतर जातियों की प्रबलता रही है। नाग जाति में अनेक ने वैदिक काल में ब्राह्मण और ऋषि का पद प्राप्त किया था।

नाग काश्यप हैं। नागों की माता का नाम विनता था। कद्रु सर्पों की जननी है। सर्प और नाग भाई भाई हैं। काश्यप गरुड़ से इनकी शत्रुता रही है। यक्ष और नागों को अमृत—सोम का रक्षक कहा गया है।[3] पर्वत में कुबेर के स्वर्ण तथा धन की रक्षा करने में नाग भी नियत था।[4] भरत, जटी नागों को रावण ने जीता था। नाग सुंदरियों को बंदी बना लिया था। नागाह्वय नगर में धर्म चक्र का प्रवर्तन हुआ था। परवर्तीकाल में नागाह्वय

---

[1]लिंग पुरुष इत्युक्तो योनिस्तु प्रकृति स्मृता।
नाग काल समाख्यात सम्बन्ध स्तु तयो द्वयो॥
—आधानिक रहस्य की टीका में भुवनेश्वरी संहिता से उद्धृत

[2]भारतीय प्रतीक विद्या पृ० १७

[3]यक्ष ? पृ० ३१

[4]०पिक मायथालाजी पृ० २७

हस्तिनापुर को कहते थे ।[1]

भोगवती नागों की राजधानी थी । वहाँ का राजा शेष था ।[2] कुरुओं का प्रारम्भ क्या नाग जाति से जोड़ा जा सकता है ? क्रिवि=क्रिमि, और यह नाग का नाम है । पचाल सम्भवत पाच नाग जातियां हैं । धृतराष्ट्र, ऐरावत, धनजय, वदिक नाग हैं । नाग विवाद करता है । वासुकि उत्तर देता है । मुख्य नाग ये हैं—कर्कोटक [सप], वासुकि [भुजग], कच्छप, कुड, तक्षक [महोरग] । एक भोगवती सर्पो का देवी आसुरी सम्बध है ।[3]

नाग लोग प्रधानत शिव के उपासक थे और सुपण लोग विष्णु के । गरुड विष्णु के वाहन हैं और नाग शिव के भूषण ।[4] कहीं कहीं नागों को वरुणोपासक बताया है । आय भी इन्हें नीच नहीं समझते थे । राजतरगिणी के अनुसार नागकन्या चन्द्रलेखा का विवाह एक ब्राह्मण से हुआ था । ऐसे विवाह उन दिनों सभी तरह से वध समझे जाते थे । पांडव अर्जुन का विवाह नागकन्या उलूपी से हुआ था ।[5] सोमश्रवा नागकन्या गभसम्भूत महातपस्वी हुए हैं, इन्होंने जनमेजय के यज्ञ मे पौरहित्य किया था ।[6] जरत्कारु महातपा, ऊध्वरेता तपस्वी थे । नि सतान होने के कारण इनके पूवज अधोगति मे जा रहे थे । जरत्कारु की प्राथना पर नागराज वासुकि ने अपनी बहिन का सम्बन्ध इनके साथ कर दिया ।[7] इससे उत्पन्न सतान ने जरत्कारु के पित पितामहों का अधोगति से उद्धार किया था । जनमेजय को नाग यज्ञ से विरत कराने वाले तपस्वी आस्तीक का मातकुल नाग था ।[8] इत्यादि प्रमाणों से स्पष्ट रूप से सिद्ध है कि—नाग यहा जन्तुवाचक शब्द नहीं है ।

कालिय नाग गरुड के भय से रमणीक द्वीप छोड कर (कालो) दह म आकर बसा था ।[9] गरुड नागों के प्रबल शत्रु थे, यह पहले बताया जा चुका है । खूब सभव है इन दोनों (नाग और सुपण) जातियों के लांछन

---

[1]वही पृ० ८१
[2]वही पृ० ३२
[3]श्री रागय राघव —प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास पृ० ८८
[4]श्रीसेन —संस्कृति संगम पृ० २६
[5]महाभारत —सभापर्व
6 ,, आदिपर्व पौष्य १७ अ०
7 ,, आदि० ४६ अ०
8 ,, आदि० ५६ अ०
[9]श्रीमद्भागवत-१० अ० १६ श्लो० ६०

(टोटेम) ये दोनों (सर्प और पक्षी) जन्तु थे।[1] मन्दोसर से प्राप्त गुप्तकालीन स्तूप के अंकन से भी यही प्रमाणित होता है।[2]

नागदमण कथा का प्रयोजन

नागदमण के रचयिता तथा श्रीमद्भागवतकार का मुख्य उद्देश्य, भगवान् श्रीकृष्ण की अलौकिक लीलाओं का परिचय देना होते हुए भी, दोनों की वर्णन शैली भिन्न भिन्न है। नागदमण का कथा संगठन काव्यात्मक दृष्टि को ध्यान में रखते हुए किया गया प्रतीत होता है और श्रीमद्भागवत का इतिवृत्तात्मक दृष्टि से। यथा —

नागदमण की कथा संक्षिप्ति

माता यशोदाजी के प्रबोधन से सचेत होकर भगवान श्रीकृष्ण प्रातःकालीन भोजन से निवृत्त होकर गो चारणार्थ घर से प्रस्थान करते हैं। सकल गोप बालक तथा बछड़े उनके साथ हैं। गोपिकाएं अपने अपने घरों पर खड़ी हु[illegible] भग[illegible]ृष्ण की बाट जोह रही हैं। कई गोपिकाएं भगवान श्रीकृष्ण को ओर [illegible]ती हैं। वे समस्त गो धन को एकत्रित करके वन की ओर प्रस्थान करते [illegible] [illegible]ना तट पर पहुंचने के उपरांत गोप बालकों के प्रस्ताव से कन्दुक क्रीड़ा [illegible] की जाती है। दोनों पक्ष में अपार गोप बालक हैं। भगवान श्री कृष्ण उनके मध्य खेल रहे हैं। दोनों पक्षों के परस्पर संघर्ष से गेंद उछल कर यमुना के गंभीर जल में जा गिरती है। भगवान श्रीकृष्ण गेंद लाने एवं कालिय के दुष्प्रभाव को सदा के लिए समाप्त करने के निमित्त—तत्काल कदम्ब की टहनी पकड़ कर यमुना में कूद जाते हैं। यह वृत्तांत तीव्र वेग से समस्त विश्व में व्याप्त हो जाता है। माता यशोदाजी तो इस वज्र रूपी आघात से कदली स्तम्भ की तरह गिर पड़ती हैं। समस्त व्रजमण्डल के निवासी व्याकुल होकर यमुना तट पर पहुंचते हैं। भगवान श्रीकृष्ण को वहां न देखकर सबके सब आर्तनाद करते हुए विलाप करते हैं। गाय, वत्स, बछड़े सभी स्तब्ध खड़े हैं। इधर भगवान श्रीकृष्ण कालिय के दरबार में पहुंचते हैं। कालिय सो रहा है। नागपत्नियां भगवान के बालसुलभ सौंदर्य को देखकर मुग्ध हो जाती हैं। समस्त नागलोकवासी उन्हें देखने के लिए कालिय के दरबार में एकत्रित हो गए हैं। नागपत्नियां भगवान श्रीकृष्ण से परिचय पूछती हुई आश्चर्य करती हैं—लाला, कहीं मार्ग तो नहीं भूल गए हो, यह सांप का घर है? आप कालिय के सोते सोते वापस लौट जाइए। भगवान श्रीकृष्ण प्रत्युत्तर में अपनी गेंद जो नाग

---

[1] श्री सेन —संस्कृति संगम पृ० २८

[2] देखिए पृ० संख्या १३ पादटिप्पणी तथा चित्र

पत्नियों ने छुपा रखी है उसे की माग करते हैं। नागपत्निया पुन कालिय की भयकरता का वर्णन करती हैं। भगवान श्रीकृष्ण को कालिय के कुत्सित स्मरण हो आते हैं। वे कालिय के साथ युद्ध के लिए अड जाते हैं। नागपत्निया बालक के भोलेपन पर आश्चर्य प्रकट करती हैं। कालिय से बड बडे राजा तक कापते हैं, जिनके पास अपार सेना है। तुम्हारे पास तो शस्त्रास्त्र के नाम पर केवल एक मुरली है। भगवान श्रीकृष्ण कालिय को भी अपने समान निरस्त्र बताते हैं। हम दोनो शस्त्रविहीन हैं। भाग्य और हमारा बाहु युद्ध होगा। हार जीत भगवान के हाथ है। लाख समझाने पर भी जब भगवान श्रीकृष्ण अपने हठ को नहीं छोडते हैं तब नागपत्निया भय प्रयोग करती हैं। यमुनाजी भगवान के महत्त्व का वर्णन करती हुई कहती हैं—यह बालक और कोई नहीं, स्वय भगवान हैं। नागपत्निया भगवान से हार जाती हैं। भगवान श्रीकृष्ण मधुर तथा उच्च स्वर मे वेणुवादन करते हैं। मधुर स्वर समस्त ब्रह्माड मे व्याप्त हो जाता है। व्रज निवासियों की लुप्त चेतना पुन जाग्रत हो जाती है। उच्च स्वर से कालिय की तन्द्रा भग होती है और वह अपने दरबार मे भगवान कृष्ण को देखकर फुफकारता हुआ उन पर आक्रमण करता है। भगवान पर इस का कोई प्रभाव नहीं होता। दोनों योद्धा मल्ल युद्ध मे प्रवृत्त होकर गुथ म जाते हैं। यमुना का जल उनके सघर्ष से मथा जा रहा है। भगवान के सबल हाथ कालिय की ग्रीवा पर पडते हैं। जिस प्रकार गारुडी साप के साथ खेल करता है उसी प्रकार भगवान श्रीकृष्ण कालिय से खेल रहे हैं। कालिय जोर जोर से फुफकार रहा है। भगवान श्रीकृष्ण हाथों और पैरों से निरन्तर प्रहार कर रहे हैं। समस्त लोक कपायमान हैं। इस दृश्य को देखने के लिए देवता अपने-अपने विमानों में बैठ कर आ गए हैं। भगवान श्रीकृष्ण के प्रहारों से कालिय का गात्र भग हो जाता है। वे उसे एक हाथ से उठा लेते हैं तथा दूसरे हाथ से उसकी दष्ट्राए तोडते हैं। वह अपने सहस्त्र फनों से रक्त वमन कर रहा है। मुह से फन गिर रहे हैं। श्वास नासा सपुट मे उलझ गया है। इस प्रकार कालिय विवश होकर गिर पडता है। भगवान श्रीकृष्ण तत्काल कूद कर उसके सिर पर चढ जाते हैं तथा नृत्य करने लगते हैं। नागपत्नियां अपने पति की दुर्दशा देखकर भगवान श्रीकृष्ण से उसे छोड देने के लिए विनय करती हैं। भगवान श्रीकृष्ण उसे यथाशीघ्र छोड देने का वचन देते हैं। नागपत्निया भगवान की पूजा अर्चा करती हैं। भगवान श्रीकृष्ण कमल की नाल से कालिय के नकेल डालते हैं तथा उसकी पीठ पर सवार होकर उसे व्रज की गलियों एव नद के आगन मे घुमाते हैं। इस प्रकार कालिय का मानमर्दन करके तथा उसे दह से निकाल कर भगवान श्रीकृष्ण अपने दोनों हाथ जोडे हुए माता यशोदा जी की ओर आ रहे हैं।

भगवान श्रीकृष्ण यह समझ कर कि— कालिय नाग ने यमुना का जल दूषित कर दिया है, उसके शुद्धयर्थ यमुना में कूद पड़े और अतुल बल वाले मत्तगजराज के समान कालिय दह का जल उछालने लगे। कालिय नाग को अपने निवासस्थान का इस प्रकार से तिरस्कार सहन न हुआ। वह चिढ़ कर भगवान श्रीकृष्ण के सम्मुख आया। भगवान श्रीकृष्ण को विषाक्त जल में निर्भय और निडर हो कर क्रीड़ा करते देख कर वह और भी क्रोधित हो गया। उसने भगवान श्रीकृष्ण के मर्मस्थानों पर आघात करके अपने शरीर के बंधन से जकड़ लिया। भगवान श्रीकृष्ण नागपाश में आबद्ध होकर निश्चेष्ट हो गए। उनकी यह दशा देख कर उनके प्रिय सखा, गाय, बैल, बछिया सभी कातर स्वर से विलाप करने लगे। इधर व्रज में भी पृथ्वी, आकाश और शरीरों में भयंकर उत्पात होने लगे। नंद बाबा आदि गोपों ने पहले तो इन अपशकुनों को देखा फिर यह जाना कि— आज श्रीकृष्ण बिना बलराम के गौएं चराने गये हैं तो वे बहुत व्याकुल हुए तथा अपने प्रिय को ढूंढते ढूंढते यमुना तट पर पहुंचे। उन्होंने दूर से ही भगवान श्रीकृष्ण को कालिय के बंधन में बंधे हुए तथा कुण्ड के किनारे ग्वाल बालों को मूर्छितावस्था में देखा। गौएं, बैल बछड़े आर्त्त स्वर से रांभ रहे थे। इस प्रकार का दृश्य देख कर वे गोप भी मूर्छित हो गए। माता यशोदाजी तथा नंद बाबा तो दह में कूदने तक को उद्यत हो गए, पर भगवान के पराक्रम को जानने वाले बलरामजी के प्रयत्नों से उनके जीवन की रक्षा हुई। मुहूर्त तक सर्प के बंधन में रहने के उपरांत भगवान श्रीकृष्ण ने अपने शरीर की वृद्धि करना प्रारम्भ किया। परिणामस्वरूप सांप का शरीर टूटने लगा और उसने अपना पाश छोड़ दिया तथा भगवान के सम्मुख क्रोधित हो कर फुफकारने लगा। भगवान श्रीकृष्ण पैतरे बदल बदल कर उसके प्रत्येक आक्रमण को विफल कर रहे थे। ऐसा करते करते कालिय का बल क्षीण हो गया तब भगवान श्रीकृष्ण उछल कर उसके शिर पर सवार हो गये तथा कलापूर्ण नृत्य करने लगे। भगवान श्रीकृष्ण के भक्त गंधर्व, देवता, चारण एवं देवांगनाएं बड़े प्रेम से वाद्य यन्त्र बजाने लगे। कालिय नाग के सौ सिर थे। जिस सिर को वह नहीं झुकाता था उसे भगवान अपने पद तल प्रहार से कुचल देते। इस प्रकार कालिय की जीवनशक्ति शनै शनै क्षीण होने लगी। वह नथुनों तथा मुंह से खून उगल रहा था। कालिय, मन ही मन भगवान श्रीकृष्ण की शरण में गया। अपने पति की दुर्दशा देखकर नागपत्नियां भी भगवान की शरण में आई और स्तुति करने लगीं। भगवान ने दया करके उस

छिन्न भिन्न शरीर वाले कालिय को छोड़ दिया। तब उसमें कालिय मे चेतना शक्ति का संचार हुआ। उसने बडी दीनता से भगवान श्रीकृष्ण की स्तुति की। भगवान ने उसे गरुड़ों से अभय करते हुए तत्काल यमुना को छोड़ कर समुद्र मे जाने का आदेश दिया। उनका आदेश प्राप्त करने के पश्चात्–कालिय नाग एवं उसकी पत्नियों ने दिव्य वस्त्र, पुष्प माला, मणि, आभूषण, दिव्य गंध, चंदन और उत्तम कमलों की माला से भगवान श्रीकृष्ण का पूजन अर्चन किया। तत्पश्चात सपरिवार भगवान की वंदना परिक्रमा करके रमणक द्वीप की ओर प्रस्थान किया।

नागदमण कथा मे भूला सायाजी की मौलिकता

उपर्युक्त दोनों कथा गठनों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर नागदमण का कथा गठन अधिक विज्ञानसम्मत एवं मौलिक प्रतीत होता है। भागवत मे भगवान श्रीकृष्ण एक बालक होते हुए भी एक सर्वशक्तिमान परमेश्वर के स्वरूप मे चित्रित हुए हैं। नागदमण म उनके बालस्वरूप का निर्वाह कवि की विशेषता है। यमुना तट पर गोप बालकों की गेंद कीड़ा सांयाजी की मौलिक उदभावना है और सत्य भी। वर्तमान म भी ग्वाले यह खेल खेलते देखे जाते हैं तथा गेंद को दुगम से दुगम स्थान पर से लाने का यत्न करते हैं।

भागवत के श्रीकृष्ण यमुना म कूदते ही जल का विलोडन करके कालिय को क्रोधित होने का अवसर देते हैं। नागदमण का कालिय स्वभाव से ही क्रूर है वह बालक वृद्ध का भेद का नहीं समझता है ऐसा जाना है। कालिय दरबार तथा नागपत्नियों के साथ कल्पित स्वरूप मौलिक प्रसग जोड़ कर कवि ने कथा प्रवाह को अक्षुण्ण रखा है। भगवान श्रीकृष्ण के बाल सुलभ माधुर्य तथा वाणी के द्वारा उत्पन्न एक मनोमुग्धकारी दृश्य पर कवि स्वयं मुग्ध है "सुणयो ऊर येन सु पनगी सब ही, बड़ा भागरी नागरी नारी वेही" कह कर नागपत्नियों के भाग्य की सराहना करता है। भगवान श्रीकृष्ण का कालिय के साथ युद्ध करने का हठ भी बालसुलभ वृत्ति का परिचायक है। बालक कृष्ण निर्भीक हैं। गौ महत्ता का प्रसंग नागदमणकार की अपनी रचना है। भगवान श्रीकृष्ण की आज्ञा भारी है। अतः सर्वहित सम्पत्ति की रक्षा करना उनका धर्म है। नेति नेति प्रक्रिया से नागपत्नियों द्वारा सत्य एव अहंकार उपर कवि की घोर भावना का परिचायक है। के लिए के साथ साकार आचरण का सबध किसी भी घोर काव्य के भाव वचन से कम न है।

नागदमणकार कवि होने के साथ साथ भक्त भी हैं। उन्हे अपने इष्टदेव के प्रभाव पर रचमात्र भी आंच आना पसद नहीं है। भागवतकार को महता भर नागपाश मे जकड़े हुए निश्चेष्ट कृष्ण की चिन्ता नहीं है पर नागदमणकार

इस प्रसंग को अन्य ढंग से प्रस्तुत करते हैं। कालिय क्रुद्ध होकर आक्रमण करता है, प्रहार करता है, पर भगवान पर वे पुष्प पखुड़ियों के प्रहार के समान असर करते हैं। पुष्प सत्कारार्थ हमेशा चढ़ाते ही हैं।

भागवतकार कालिय के पराभव के पश्चात उसे सीधे यमुना से ही समुद्र में चले जाने का आदेश भगवान श्रीकृष्ण से दिलवा देते हैं। नागदमणकार इसे पर्याप्त नहीं समझते हैं। वे इसके उपरांत भी भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा कमलनाल से कालिय के नकेल डलवाते हैं। नकेल के द्वारा भयकर से भयकर चलनाली जतु स्ववश हो जाते हैं यह सत्य है। दुष्ट मानवों के भी नकेल डाल कर घुमाना प्रसिद्ध है। स्ववश करके यत्र तत्र घुमाना प्रतिद्वंदी की हीनता का भी द्योतक है।

भयकर कालिय को परास्त करने के पश्चात भगवान श्रीकृष्ण विनय सहित अपने दोनों हाथ जोड़े हुए माता यशोदाजी के सम्मुख उपस्थित होते हैं। इस प्रकार नागदमण की कथा में भगवान श्रीकृष्ण के बालस्वरूप का आदि से अंत तक निर्वाह हुआ है। अनुक्रम से उत्थापन मगला, श्रृङ्गार, राजभोग आदि झांकियों का वर्णन कवि का वल्लभकुल सम्प्रदायानुयायी होना प्रमाणित करता है।

तृतीय अध्याय

नागदमण की भाषा और व्याकरण

भाषा

नागदमण की भाषा राजस्थान के अंतर्गत सत्रहवीं शताब्दी की प्रचलित साहित्यिक भाषा—डिंगल है।[1] डिंगल शब्द की व्युत्पत्ति की तरह भाषा के सम्बन्ध में (भी) विद्वानों में अद्यावधि पर्याप्त भ्रम फैला हुआ है। अधिकांश विद्वान साधारणतया डिंगल को राजस्थानी का एक रूप मानते हैं। अतएव इस प्रसंग में, राजस्थानी की वास्तविक स्थिति क्या है इस ओर भी संकेत कर देना अनुपयुक्त न होगा।

"राजस्थानी भाषा" शब्द "हिन्दी भाषा" के समान ही भ्रमात्मक है। जिस प्रकार वस्तुतः हिन्दी—अनेक विभाषाओं का एक सामूहिक नाम है, ठीक वही परिस्थिति राजस्थानी भाषा के साथ है, जो कि हिन्दी की एक विभाषा के रूप में मान्य है।[2]

राजस्थानी—राजस्थान प्रान्त की भाषा है। राजस्थान केवल आधुनिक राजपूताना-प्रान्त तक ही परिमित नहीं है, किन्तु मालवा और हिसार का भी बहुत-सा भाग राजस्थान के ही अंतर्गत समझा जाना चाहिए। राजस्थानी इस समस्त भू-खण्ड की भाषा है[3] जिसमें मारवाड़ी (जिसके अंतर्गत मेवाड़ी भी), ढुंढाड़ी (जिसके अंतर्गत हाड़ौती भी), मालवी और बागड़ी उपभाषाएं (बोलियां) प्रमुख हैं।

राजस्थानी की समस्त बोलियों में मारवाड़ी प्रमुख है। मुख्यतया लिखित रूप में वर्तमान साहित्य, जो कि एक प्रकार से इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि—मारवाड़ी राजस्थानी की प्रतिमित अथवा परिनिष्ठित (Standard) भाषा है। यह प्रतिमित मारवाड़ी ही वस्तुतः डिंगल है जिसे मरु भाषा राजपूतानी,

---

[1] श्री मेनारिया—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १७६

[2] डा० जगदीशप्रसाद—डिंगल साहित्य पृ० २६१

[3] श्री स्वामी—ढोला मारू रा दूहा पृ० १०७ (प्रस्तावना)

पश्चिमी राजस्थानी आदि नामों से अभिहित किया गया है।[1] इससे एक महत्वपूर्ण बात यह भी सिद्ध होती है कि—प्रारम्भ में डिंगल बोल चाल की भाषा थी। बाद में बोल चाल की भाषा और साहित्यिक भाषा में अंतर हो गया और डिंगल का प्रयोग साहित्य की भाषा के लिए होने लगा[2] और डिंगल साहित्य राजपूताना के चारणों तथा भाटों द्वारा विशेष समृद्ध हो उठा।[3]

श्री मेनारिया जी ने नागदमण की चर्चा करते हुए इसकी भाषा पर किंचित गुजराती का प्रभाव स्वीकार किया है तथा कवि का काठियावाड़ी होना इसका कारण माना है,[4] परन्तु यह तो निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि—गुजरात तथा मारवाड़ अथवा पश्चिमी राजस्थान की भाषा सोलहवीं शताब्दी ईस्वी तक एक थी[5] तब इसी अवधि के आसपास की रचना पर गुजराती के प्रभाव का प्रश्न ही नहीं उठता है। हां, प्रकाशित ग्रन्थ में भाषा के गुजरातीकरण की प्रवृत्ति लक्षित होती है,[6] यह दूसरी बात है।

शब्द-समूह

नागदमण की भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी चार प्रकार के शब्द उपलब्ध होते हैं जिन में तद्भव और देशज शब्दों का बाहुल्य है।

व्याकरण

किसी भाषा के ज्ञान अथवा दूसरे शब्दों में शुद्ध लिखने, पढ़ने और बोलने के लिए उसके व्याकरण की जानकारी नितांत आवश्यक होती है।[7] अतएव डिंगल भाषा के व्याकरण को ध्यान में रखते हुए नागदमण का संक्षिप्त व्याकरण दिया जा रहा है।

1(अ) डा० जगदीशप्रसाद—डिंगल साहित्य पृ० २६२
(आ) डिंगल उपनाम कहुंन मरुवाना हु विवध।
अपभ्रंश जामे अधिक, सुन्दर वीर रस जथ॥
—महाकवि सूर्यमल—वंशभास्कर प्र मा पृ० १४७

2डा० माहेश्वरी—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० ६

3डा० चटर्जी—भारत की भाषाएँ और भाषा सम्बन्धी समस्याएँ पृ० ४१

4श्री मेनारिया—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १०६

5डा० चटर्जी—राजस्थानी भाषा पृ० ३६

6डा० माहेश्वरी—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १३८

7डा० जगदीशप्रसाद—डिंगल साहित्य पृ० २६२

ध्वनि समूह

१ स्वर—नागदमण मे प्रयुक्त अे, ॴ, ओ, औ के ह्रस्वरूपों को छोड कर बाकी स्वर हिन्दी के समान ही हैं। यथा—

अ —मध्य, अध विवृत, ह्रस्व।

आ —अग्र, विवृत, दीघ।

ॴ —यह 'आ' का ह्रस्व रूप है। दमण म प्रयुक्त इस ध्वनि का उच्चारण लगभग 'अ' के समान ही होता है—

१ माहो माह आणद दाख मुरक्को। छद ३२

२ आया ओद्रक सूरमा ऐणि आर। ,, ४९

३ जाळै विरम नीला वहै विरल झाळा। ,, ५३

इ —अग्र, सवृत, ह्रस्व।

ई —अग्र, सवृत, दीघ।

उ —पश्च अध सवृत, ह्रस्व।

ऊ —पश्च, अध सवृत, दीघ।

कहीं-कहीं छद की सुविधानुसार इसका भी ह्रस्व उच्चारण पाया जाता है—

१ दूजै नवर घेन गोलस्व दू णी। छद ७१

२ ऊभी मुरळी आप लीध अधूर। ,, ९४

अे —अग्र, अध विवृत, दीघ।

अ —अग्र, अध सवृत, ह्रस्व।

इस ध्वनि के लिए कोई स्वतन्त्र लिपि चिह्न नहीं है। दमण म प्रयुक्त इस ध्वनि का उच्चारण लगभग 'इ' के समान होता है—

१ देवो आपरी लाज लीधो दहू लो। छद ३३

२ खेलीजे रमीज पिता मातु खोळा। ,, ३९

३ घेर्‌यो नद रो घोट अहिकोट अहो। ,, ९९

अ —अग्र-मध्य, अर्ध विवृत, दीघ।

ॴ —यह ध्वनि 'अ' का ह्रस्व रूप है। इसका उच्चारण लगभग अ+इ की तरह पाया जाता है।

१ अॅर कूण लाज पलो आव ओरो। छद ८१

२ पैसारा उसारा लरा पाइकारा। ,, १०२

ओ —पश्च, अध-संवृत, दीर्घ ।
ओ —पश्च, अध संवृत ह्रस्व ।

इस ध्वनि के लिए भी स्वतन्त्र लिपि चिह्न नहीं है । दमण मे प्रयुक्त इस ध्वनि का उच्चारण लगभग ह्रस्व 'उ' की तरह होता है—

१	बोलावै मळ नाथ नाखो भुरक्को ।	छंद ३५
२	मोरै नद बाबो जसोमती माई ।	,, ५८
३	जोवो नजर प्रेट्‌ राजवट्‌ जागी ।	,, ७५
४	गोपीनाथ रा हाथ आया गड्डह्‌ ।	,, १००

इत्यादि

औ —पश्च मध्य, अध संवृत, दीर्घ ।
औ —यह 'औ' का ह्रस्व रूप है । इस ध्वनि के लिए भी स्वतन्त्र लिपि चिह्न नहीं है । दमण में प्रयुक्त इस ध्वनि का लगभग 'अ+उ' उच्चारण होता है—

१	आया औद्रकै सुरमा ऐणि आर ।	छंद ४९
२	नौळी वांटते सामठी आट नाखी ।	,, ९९

अं —अनुस्वार ।

२ व्यंजन—नागदमण मे प्रयुक्त व्यंजन ळ, व, य, ड़, ण, प को छोड़ कर शेष हिन्दी की तरह ही होते हैं । यथा—

स्पर्श (स्पृष्ट प्रयत्न)
क—कण्ठ्य, अल्पप्राण, अघोष
ख—कण्ठ्य, महाप्राण, अघोष
ग—कण्ठ्य, अल्पप्राण, सघोष
घ—कण्ठ्य, महाप्राण, सघोष
ङ—कण्ठ्य, अल्पप्राण, सघोष, सानुनासिक
च—तालव्य, अल्पप्राण, अघोष
छ—तालव्य, महाप्राण, अघोष
ज—तालव्य, अल्पप्राण, सघोष
झ—तालव्य, महाप्राण, सघोष
ञ—तालव्य, अल्पप्राण, सघोष, सानुनासिक
ट—मूर्धन्य, अल्पप्राण, अघोष
ठ—मूर्धन्य, महाप्राण, अघोष

ड—मूर्धन्य, अल्पप्राण, सघोष
ढ—मूर्धन्य, महाप्राण, सघोष
ण—मूर्धन्य, अल्पप्राण, सघोष, सानुनासिक
त—दन्त्य, अल्पप्राण, अघोष
थ—दन्त्य महाप्राण, अघोष
द—दन्त्य, अल्पप्राण, सघोष
ध—दन्त्य, महाप्राण, सघोष
न—दन्त्य, अल्पप्राण, सघोष सानुनासिक
प—ओष्ठ्य, अल्पप्राण, अघोष
फ—ओष्ठ्य, महाप्राण, अघोष
ब—ओष्ठ्य, अल्पप्राण, सघोष
भ—ओष्ठ्य, महाप्राण, सघोष
म—ओष्ठ्य, अल्पप्राण, सघोष

अन्तस्थ

य—तालव्य, अल्पप्राण, ईषद्विवृत
र—मूर्धन्य, अल्पप्राण, ईषद्विवृत घर्षित
ल—दन्त्य, अल्पप्राण, ईषद्विवृत, पार्श्विक
व—दन्तोष्ठ्य, अल्पप्राण, ईषद्विवृत

ऊष्म

स—दन्त्य, तालव्य, महाप्राण, अघोष
ह—कण्ठ्य, महाप्राण, सघोष

अन्य

ड़—मूर्धन्य, अल्पप्राण, सघोष, उत्क्षिप्त
ढ़—दन्त्य, महाप्राण, सघोष, उत्क्षिप्त
ब—राजस्थानी व। इसका उच्चारण संस्कृत के 'व' से भिन्न होता है।
ळ—मूर्धन्य, सघोष, [उत्क्षिप्त]

कारक

मागदमण की भाषा में—संज्ञा, सर्वनाम और क्रिया सूचक शब्दों का प्रयोग हिन्दी भाषा के समान ही दो लिंग तथा दो वचन में हुआ है। नपुंसकलिंग के रूप भी उपलब्ध हैं परन्तु नपुंसकलिंग एवं पुल्लिंग में विशेष अन्तर नहीं है। कारकों के लिए विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग हुआ है तथा कहीं-कहीं

विभक्ति प्रत्ययविहीन शब्दों के मूल तथा विकारी रूपों से काम चलाया गया है। यथा—

कारक	प्रत्यय	उदाहरण	
कर्त्ता	×	पदम जगाया जिम चकराना।	ना. २
	×	सुव [illegible] पतीज घाड बमसा।	१४
	यो	मानसानम पम [illegible] मटाय।	५
	—	कपूरो पो पाण बोका अगन।	२
कर्म	×	आवो मान्को नाल बना बनावो।	१७
	×	लिया सारता [illegible] बहू किनारो।	९
	नु	फाडोराणनू जाणियो बाय दूह।	१०१
	,,	बनोरा तोई राटानू पुत्र बाम।	११५
	नै	भगवान पर गोवो मटाय।	, ५
	,,	अहिरावन बाय कोई न गुयो।	, ११९
करण	×	गऊ मल्प बोबा गुरोगाह सेवा।	, ६१
	से	पट देहिव नेह मेवास येरो।	, १०
	,,	न बोने करीबे नाच निहाले।	,, १८
	,	कानै हो नयो सामऊ वो न नवाले।	,, १८
	सू	मता नेहसू ते गोवो निहरऊ।	, ४
	,,	हुई नवरी धानू बेन हेला।	, ६
	हू	फाडोराणहू साम ही पंत बाय।	, ५२
	—	पर आपणो भाग राणो अनम्र।	१०
सम्प्रदान	×	रलो बाऊ दलो दमा मूहत आप।	, ६५
	नू	फाडोराणनू आग्यु तेन बोय।	, ६७
	—	बपा देस बोम विप्र बेर बोल।	, ६२
अपादान	सै	हिय उतरी बात गोवाऊ हाथ।	, १४
	,,	गयो जाणि विरामणि रव गोऊ।	, १८
	हूत	वठाहुन आयो मठ चाम बेहरा।	, ११
	सू	रसो छोरो ते मानसू बात आडो।	,, ६८
	,,	अहिरारिसू नारो माप अनेरो।	,, ६६
सम्बन्ध	×	राणी कहवा वम रयत रानी।	, ७४
	,,	रहो बांगड़ो देव दाणव राणी।	,, ७२
	को	पय नागको धरिरा मारयो हो।	, २८
	,,	वहो दुष रावाको मा गुणहाई।	,, ६१

चो	उतारेवा ए भामचो भार आयो ।	छंद ११
च	मलो हुक वल्भद्रचै नाम भाई ।	" ५८
रा	काळीनागरा कान समाळ केवा ।	" १३
र	पहूच प्रभुर लटक महूची ।	" २४
रो	अमा नागणीपत्यरो जूझ आछ ।	" ५१
री	घर कसर तातरी टाट घुट्टी ।	" ७४
तणा	महामद्र जाति तणा कान मोती ।	" २२
तणो	हुई डुहू मन्ला तणो हल हाय ।	" १२
तण	जमुना तण भालियो नार आड ।	" १२
तणो	तणा कसरी कसतूरी तिलक ।	" २७
"	अवनो तणा मारि ले रूप आयो ।	" ६५
हू	बोहू भ्रुकुटी कोरहू देखि द्रूहे ।	" २७
ओ	पडोछा नहीछो प्रिया राज पायो ।	" ११६
अधिकरण ×	इसो आज ते कोण भूलोक आछ ।	" ५२
"	मडाया मथुरा धरा वास मोरा ।	" ५८
अ	मुण्यो रूप वद सु पेख्यो सवेही ।	" ३२
"	पहूचै प्रभुर लटक महूचो ।	" २४
थ	हिंडोळ पलाट धर हूलरायो ।	" २१
माहे	पियूस दुवावहि माहैपरेवा ।	" ६५
	मणि नग हीरातणी ज्यात माहे ।	" २४
मां	जणणोतणी जूण मा ए न आयो ।	" ११
संबोधन ×	प्रभू आपरा जाणि अमत पायो ।	" १७
"	कहै कीजिय कान्ह मीख विमाग ।	" १

सामान्य टिप्पणियां

१ - स्वर से आरम्भ होने वाले प्रत्यय का प्रयोग करने पर पूर्व शब्द के अंतिम स्वर का प्राय लोप कर दिया गया है ।

२ तणो, माहे आदि प्रत्ययों का प्रयोग शब्द से पूर्व भी हुआ है ।

३ सम्बन्ध कारक के प्रत्ययों में परस्य शब्द के लिए लिंग वचन के अनुसार लिंग वचन का परिवर्तन हुआ है ।

४ करण व सम्बन्ध कारक का 'आ' प्रत्यय केवल बहुवचन वाची शब्द के आगे प्रयुक्त हुआ है ।

५ बहुवचन में अकारांत शब्द के प्रत्यय लगने के पूर्व अंतिम 'अ'

का प्राय 'गो' हो गया है।

६ ओकारान्त शब्द बहुवचन में अकारान्त हो गये हैं।

७ हिन्दी के आकारान्त शब्द [राजा, पिता को छोड़ कर] राजस्थानी में ओकारान्त हो गये हैं।

८ ईकारान्त व ऊकारान्त शब्दों के आगे बहुवचन में 'आं' या 'वां' जोड़ कर अन्तिम स्वर को ह्रस्व कर दिया गया है।

९ इकारान्त व उकारान्त शब्दों के बहुवचन बनाते समय उनके आगे 'आं' या 'वां' जोड़ दिया गया है।

१० हिन्दी और संस्कृत शब्दों के मध्य आने वाले रेफ को स्थानान्तरित करके शब्दों को निर्मित कर दिया गया है। यथा—धर्म—ध्रम, कर्म—क्रम इत्यादि।

११ जिन शब्दों में रेफ नहीं होता है उनमें रेफ का आगम कर लिया गया है।

सर्वनाम

नागदमण में सर्वनामों का निम्न शब्दों में प्रयोग हुआ है। उनका विवरण इस प्रकार है —

अमां (हमारा रे)	अमां पंच तोडा गयो थार आण।	छं ७१
	अमां मारगी पावरो मूंह आठे।	,, ५१
	हाम्हां साम्हण हू सामी निजर आव।	,, ८०
	अमां देह लीहा गमा मत सोबी।	,, ११२
अमारा रो (हमारा)	अमारा मनतो लगा एक ओरो।	,, ५८
	अर लेखणो स्याम सूंठो अमारो।	,, ५४
अमांगू (हमारे से)	थारा दार ते मान बोल अमांगू।	,, १११
अम (हमारे)	अम हाथ म मारणो रात लगो।	,, ६६
आ (यह उभयलिंगी है)	वहो दूधरा आ गुमराई।	,, ६१
	पडीए किड़ नीमड़ आ कयावो।	,, ७८
आप (स्वयं)	टगोवा गयो आप आप टगाव्यो।	,, ९२
	दियो आपगू आप आठीज काढे।	,, १०१
	सवार घणा आप आप अरच्च।	,, ११८
	प्रभू आपरा आणि मदन पायो।	,, ९७
	दयो आपरी लाज सीधो वहलो।	,, ९९
	विभू आपरो मोल आप करावे।	,, ८०
	सुणो नागणो आपणी हद्द माहीं।	,, ८६

इसा (ऐसे)	असव्वार हुवो आप अप्पनाणो।	छंद ११८
इसो (ऐसा)	रणीज इसा मात आग रढाळा।	" २७
	इसो वाल देसो दया मूझ आव।	" ३५
	इसां छोट ल मातसू बात आछो।	" ६८
उवै (उसने)	अघोराज मारा उवै कोघ मारा।	" १०३
ए (यह)	जणणी तणो जूणमां ए न आयो।	" ९१
	उतारेवा ए भोमचा भार आयो।	" ९१
अेण (इस प्रकार की)	जाण्यो अण जुगत्ति।	" ४
अेनै (इसको)	सती वाळ अन त्रिभुवन सूझ।	" ८८
अेह (यह)	लला तू मही एह कू दस सूणी।	" ७१
	लम एह मूक्या पछ छाट लाग।	" ७३
	अहीराव न डावडो एह आडा।	" ८४
	विढ त्रिजरो एह उच्छाह वाळो।	" १२१
अेहरी (इसकी)	भट एहरी रूम एहां अदेसा।	, ८७
अंरी (इसकी)	अंरी ओगोन दसो घयन हेरी।	, ८६
अै (ये)	चयोम नहा बोल अ बाळ घाळा।	" ३०
अंरै (इसके)	अंर कू ण लाज पसो आव ओरी।	" ८१
अैसी (ऐसी)	असो मागणो कू ण जे कूप आयो।	, २९
ओ (यह)	पड लातरो घन ओ नीर नीर पीध।	" ६७
	त्रिलोकी न भासइ वोहा ओ न सूझ।	" ८७
	जितो डावडो ओ वळो देस जाण्यो।	" ९२
	मारवा ट्रो राप घाय सू ओ न मार।	, १०८
काही (कोई)	कही सू सडो पपडो तीर काही।	" ६६
किस (कौन से)	लड सो किस मूळ पूछा ल्डाई।	" ५०
किही (किसी ने)	किही कोर चपी रही मा बकाव।	, ३५
कूण (कौन)	भसी मागणो कूण जे कूप आयो।	, २१
	घड कूण घाळो तणो सीम चांप।	" ५२
	वळ दूसरो तात्र कूण घोरो।	, ५७
केण (कौन से)	अर कूण लाज पसो आव ओरी।	" ८१
कोण (कौन)	सुतो साप जगाणीज केण कोड।	" ९८
जिक (जो)	इसो आन ते कौण मूलोक आछं।	" ५२
जिरी (जिसकी)	जिमाव जि। मानता भोग जाणो।	" २
	जिरी फूक ठाग मर दूब फाला।	" ५३

जे (जिसरी)	असी मागणो कूण जे कूरत आयो ।	छंद २९
जेही (जैसा)	नमोवा ढळो कवळो राम जेही ।	,, १५
जेही (जैसों को)	सामी सेस महेस जेही न सूझ ।	,, ११६
तमा (तुम आप)	तमा देय मोटा अमां मत्त थोडी ।	,, ११२
	तुम्हारा रेकारा जिकारा तमासू ।	,, ११३
ता (वह)	थई थोसळो सिणगळो नावता ता ।	,, ७८
ताहरी (तुम्हारी)	सव ताहरी वेच सप्रघट्ट नूटी ।	,, ६४
तिन (वे)	न राम तिन मागणो बोल यू थो ।	,, ६४
तिसो (वैसा)	तिसो मागणो मधुरोचन टीको ।	,, १२
तुना (तुम्हें)	मज नद सोई तुना पुत्र भाय ।	,, १५६
	तुन देसापू प्राज यगा तमासा ।	,, ५
तू (तू)	कुडेथा जू तू माग काळी जगाव ।	,, ४०
	पछा पोवरा मागणो तू पिछाण ।	,, ६९
	लला तू नहीं एह कूवत लूणो ।	,, ७१
	महिनारो तू एह नेठाह आण ।	,, ७२
	वहू मागणो सुण तू रोप कान ।	,, ७६
	मजाण थाळ तू पधूथाट मापो ।	,, ९२
तूझ (तुम्हारे)	कटवरी अटवका नहीं तूझ केड ।	,, ४१
	दियो वास दूरतर तिरो तूझ वादे ।	,, १२०
तूही (तुही)	सरो हेक तूही पिया सब सोटा ।	,, ११३
ते (वह)	रम्यो स्याम ते ठाम जोवत रामा ।	,, १९
	जुयो नागणो ते हुतो गव्यु जामो ।	,, ६५
	ते धवण सुणण अहिराय सणो ।	,, १२२
	आया आज ते माफ कीज अमागू ।	,, ११३
तेण (उस)	काळीनागनू जगवू तेण कीध ।	,, ६७
तेह (उसे)	मथा मेहसू तेह गोपी निहाळ ।	,, ४
तोनू (तुम्हें)	पले तेतसा आज तोनू पसाय ।	,, ८२
तोन (तुम्हें-आपको)	जुड हव तानै प्रणायत जेहा ।	,, ११४
तोसू (तुम्हारे से आपसे)	हिव जोडि तोसू वातां वाद हारी ।	,, ८१
थारा (तुम्हारा आपके)	राम आज थारा भुज सेन मारा ।	,, १०५
थारी (तुम्हारी-आपकी)	जुन वस थारी परस्से सनेहो ।	,, ४०
थारै (तुम्हारे)	काळीनू । मापू सो थार नमावू ।	,, ७७
	दिस मोरळो हेर थार बुभुज्ञा ।	,, ४९

	यत लोहवी सोह रिछया न थारँ ।	छद	४१
थारो (तुम्हारा)	वधारया न थारँ अज बाळ वाळा ।	,	३९
	नहीं नागणी नाग थारो निवार ।	"	७७
	प्रिया तातन गोत्र थारो पिछाण्या ।	"	६७
मूहे (मुझे)	खटक्क मुहे नागणी बोल खारो ।	"	३४
मूथ (मेरा)	प्रभू जागसी मूझ पाछा पधारो ।	"	३४
मूझ (मुझ)	इसो बाळ देखी दया मूझ आव ।	,	३५
मूथ (मरे)	मण्या नागपत्नी जिता मूथ मोर ।	"	५७
	मोरे कस मामो रहै मूझ मूळ ।	,	५९
	वह आज ते नागणी मूझ वारो ।	,	६१
	वृथा वण जाण रख मूथ वाळा ।	"	७२
मो (मेरे)	जप मो दिसो जेम काळी जगाडो ।	,	६८
मोरा (मेरा)	मझाया मयुरा घरा वास मोरा ।	"	५८
मोर (मरे)	मोर नद बाओ जसुमति माई ।	"	५८
	मोरे कस मामो रहै मूझ मूळ ।	,	५९
मारी (मेरा)	मोर देख आहीर थ गाम मांह ।	"	५६
	मोरो धाट थराट एथ न मावू ।	"	७३
	मोरो एह कलालियो द्रोहमाणो ।	"	३१
	मोरो जागसी स्वाम वाय मयूर ।	"	५५
राज (आपके)	पहीछा नहीं छी प्रिया राज पायो ।	"	११६
राजनू (आपको)	जसोदा सोई राजनू पुत्र जाण ।	,	११६
रावळो (आपका)	धळा रावळो वणिओ देखि बाई ।	"	११५
वा (उसने)	रह बाढ काढ कियो वा न रीसा ।	"	१३
वा (वह)	धळ वा सादर वरणवू ।	"	१०७
वेही (वे)	बडा मागरी नागरी नारी वेही ।	"	१
सोई (वे)	प्रभू अग लागो सोही फूल पाखो ।	"	३२
हूं (मैं)	।	"	९९
	इता दीट्चो हूं हुतो उप्पवासी ।	"	६०

विशेषण

नागदमण मे विशेषणों का प्रयोग हिन्दी की तरह ही हुआ है तथा उनके लिंग और वचन विशेष्यानुवर्ती होते हैं। गुणवाचक विशेषणों मे कुछ डिंगल भाषा के मौलिक विशेषणों का प्रयोग भी हुआ है। संख्यावाचक विशेषणों मे यौगिक संख्याओं के द्वारा बने प्रयोग विशिष्ट कहे जा सकते हैं।

घण	घण उरछय ब्याहियं प्रेह घेवा।	छद ६५
घणो	अरटो घणो साम झूठो अमारो।	,, ५४
	घणो घातियो सांकड स्याम घेरो।	,, ९८
जाडै	जमूनां तण नांसियो नीर जाडै।	,, १२
थड	थडे वेहड हूह मातो न पट्टा।	,, ४८
सवो	मिल घोट सामी सवो दोट माय।	,, १२
सवै	सय घामला सामला प्रत्यसहा।	,, ८
	रमवा सवै साय सू हेक राग।	,, ९
सामट्ठी	आग नागणी मेट सामट्ठी आण।	,, ११७
सारै	हाहाकार हक्कार ससार सारै।	,, १५
सलेप	प्रगाचार मारव सलेप गाई।	,, ९६
सख्यावाचक		
हेक	रमवा सव साय सू हेव राग।	,, ९
	मिल आयता ऊलट हेक भेर।	,, ११
	राड आपड हव हेवा सघोळा।	,, १७
	ऊमी पूट हेवो करी आत आरा।	,, २०
	मिळी नागणी हेय हेवा मिलाव।	,, २१
	दिस मोरलो हेय थार दुभुजा।	,, ४९
	सुह जोड होसी घडी हेक माहे।	,, ५६
	भलो हेक पलमह घ नाम माई।	,, ५८
	जणणी किणी हेक सू ही न जायो।	,, ८३
	खरो हेक सू ही थिया सव खोटा।	,, ११३
इकी वेवटी	इकी वेवटी चोवट आय ऊमो।	,, ६
एकणी	पुणू एकणी वार इक्कीस पाळा।	,, ७२
एको	नहीं सैन समाधि एको सआई।	,, ५७
उभै	पचास उभै सट्ट दो पट्टराणी।	, ९०
	इग्यासी उभ सो दस वाधि आठ।	,, ९१
	उभै जूग जेयो फिर नीर ऊडै।	,, १०१
दु	दिस मोरलो हेक थार दु भुजा।	,, ४९
दुहू	दुहू भुज फर काळो वमण।	,, १२२
दूजी	नारी गाठियो सूठ दूजो न सायो।	,, ८३
दूसरो	वळ दूसरो ताहर कूण वीरो।	,, ५०
दो	पचासां उभ सट्ट दो पट्टराणी।	,, ९०
दोहू	पखपार पिडार या दोहू पास।	, १०

विऊ	घडीए विऊ नीमड आ जघाचो।	स्तव ७८
विहू	विहू लोचन नीर धारा बहती।	" १८
वि हैं	चव मात, भ्राता वि हैं धन चारो।	" ६१
बिया	सरो हेक तू ही बिया सब खोटा।	, ११३
वेहू	क्रिया सारखा लोक वेहू क्निारो।	, ९
	अठ मांडसा आज वेहू असाडो।	" ३७
त्रि	सखी वाळ ऐन त्रिभुवन सूम।	" ८८
त्रिहू	पख त्रिहू पोढो मानो सोल मोरी।	" ८१
त्रीन	वर त्रीन सडो ममतेय काहा।	, १४
त्रीजैं	तर आविजो जागसी जाम त्रीजैं।	" ६९
पचा	पचा अम्रत दव इच्छ पलाळा।	" ६३
खट	पचासा उभ खट्ट दो पट्ट राणो।	" १०
आठ	इठ्यासी उभ सो दस वाधि आठ।	" ११
नौ	हूज नदर धन नौ लख्ख हूणो।	" ७१
दसैं	इठ्यासी उभ सो दसैं वाधि आठ।	" ११
सोळ	जळाबोळ मांहि कळा सोळ सहो।	" ११
	सहसा लिखी सोळ अर सयाणी।	" १०
बीसा	वदन्न बहे भोण पचास वीसा।	" १०७
इक्कीस	पुणू एकणी वार इक्कीस पाळा।	" ७२
	ब्रह्मांड इक्कीसा देखावी विहाण।	" ११५
पचासा	पचासा उभ खट्ट दो पट्टराणी।	" १४
पचास	वदन्न बहे भोण पचास वीसा।	" १०७
साठ	सखी देस बेटा लिख्या लख्ख साठ।	" ११
इठ्यासी	इठ्यासी उभ सो दस वाधि आठ।	" ११
सौ	इठ्यासी उभ सो दस वाधि आठ।	" ११
सहस्सा	सहस्सा लिखी सोळ अर सयाणी।	" १०
सहस्स	वदन्न सहस्सैं वध व्योम व्याळा।	" ५१
हजारा	हजारा मुख्यां जागसी नाग हेवा।	" ३९
हजार	ह्रिव एक ही गांठ पेर हजारैं।	" ७७
लख्ख	सखी देस बेटा लिख्या लख्ख साठ।	" ११
कोड	प्रणी यात साका बधी कोड काजा।	" १८
	गिणां वाद बोतां बेई कोड गाडा।	, ८४

सावनामिक

पुरुषवाचक तथा निजवाचक सर्वनामों को छोड़ कर अन्य सर्वनामों

का प्रयोग विशेषण की भांति हुआ है। उदाहरण के लिए देखिए सर्वनाम।

क्रिया

भाषा में क्रिया का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। नागदमण में संस्कृत मूलक तथा देशज धातुओं से विनिर्मित क्रियाएं प्रयुक्त हुई हैं। काव्य की संवादात्मक शैली में होने के कारण वर्तमानकालिक क्रिया रूपों की प्रचुरता है। जिनका बहु प्रयुक्त प्रत्यय 'अ' है। 'छ' व 'है' बहुत कम प्रयुक्त हुए हैं। भूतकालिक क्रियाएं बहुधा ओकारान्त हैं। भविष्यत्काल में ज, सी, सां, सो, ऊ प्रत्ययों का प्रयोग हुआ है। कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

वर्तमानकालिक प्रयोग

रमैं सब गोवालियां रंग रातौ।	छंद ११
धहै सांमळो ब्रज सेरी बिचाळ।	,, ४
सबा नेहन्नू नेह गोपी निहाळै।	,, ४
आया ओद्रक सुरमां गणि आर।	४९
इसो आज स कोण भूलोक आछै।	५२
रमा सारखी है सखी धण रेखा।	९०
करै मूरळी नाद ठाढो कन्हाई।	,, ९५
बिढै सांवळ सामळो सूर बाबो।	,, १०१
बाळी मागसू लीजिए बणि बांनो।	३४
फिरो कोर चपो रहो मा वकाव।	,, ३५
जमना जप्पई मागणी छोडि जोरा।	,, ५५
बकवाळ न मुंह मा चाढि बाई।	,, ७९
देवो आपरी लाज लीधी वडूलो।	३४
घटका अटका नहीं तुम बेड।	,, ४१
बळ बो सादर वरणवूं।	,, १

भूतकालिक प्रयोग

पुळी नंद मीसार आवो प्रहट्ट।	,, ७
वई बांसळी तिणळी नादवा तां।	,, ८
घणी गोम चालो चन्दे घात घोट।	,, १५
जसोदा ढळी कट्ळी लग जेही।	,, १६
परीछा नहीं छी प्रिया राज पायो।	,, ११६
माम मोनळी सोजना करण आसी।	,, ६०
तद ताहरी केय लजपट्ट त्रूटी।	,, ७४
जमुना वही पूर सिंदूर सल	,, १०८
ब्रह्मांड इक्वीसा देखावी विहाण	,, ११५

किणन दीठो का हवो सुण्यो न लीला सघ
थवनो भार ऊतारवा जाग्यो एण जुगत्ति छद ३
जमूना तण नाखियो नीर जाड " ४
दडो लार काहो चढ्यो ब्रछ डालो , १२
बळदव बूझ्यो दिखाळयो सुदामा " १३
न दीठो कदीयै न नत्र निहाळो " १९
वळ मोकळो माळिय लाडवायो " ३७
ठगवा गयो आप आप ठगाण्यो " ८०
वळो राव जेहो छळो एण बायो " ९०
पयो मार पांण भयो गात्र भग " ९२
वळै फेरियो आगण नद वाळ " ११०
प्रभू घणा घा पाडिया " ११९
तवै नदरै नेस बलभद्र न हुता " २
पलै पार पिडार था बेहू पासै " ७५
जगाडया जसोदा जदूनाथ जाग " १०

भविष्यत्कालिक प्रयोग

अमा नागणीपत्यरो जूझ आठै " १
हुसी ठाकरा आपरू आज आरो " ५१
तुनै देखावू आज वेगा तमासा " ५४
फणीनाथ नै झालसू एण पाणो " ५५
पु ह जोड होसी घडी हेक माह " ५५
फणीफण न खावसी देखि फोरा " ५६
तरै आविजो जागसी जाम श्रीजै " ५६
घवीजै नहीं बोल अै काळचाळा " ६९
काळी मू म नापू तो थारै कमावू " ३७
मोरो जागसी साम वायै मधूरै " ७७
बडा जीपसी जुद्ध वाहै बडाई " ९४
अठै माहसा आज बेहू असाडो , ९६
हजारां मुखां जागसी नाग हेवां " ३७
युलाटो जगाडो जुवो जुद्ध वायै " ३६

अव्यय

नागदमण मे क्रियाविशेषण नामयोगी, सयोजक और केवळ प्रयोगी " ५१
भेद से चार प्रकार के अव्ययो का प्रयोग हुआ है जिनका छद सख्या सहित अकारादिक्रम इस प्रकार है —

अघाणक (२१), अमॅ (३९,४०,४४), अठ (३३,३७), आ (६३ ७८) आकरू रो (५४ ११), आगँ (७५), आगो (८३), आज (३,३७,५४,५५,८२, ८३), इसो (१०९), ऊघो (६४) अेण (४,४९,५५), अेह (५५,७२,७३,८४,१ २१), अेहरी (८७), अेहा (३५), अेहा (८७), ओछो (९५), ओरो (८१), औ (९२), कठँ (५७) कठा (३३), कदि(३७), किणी (८३ ९५), किसु (४१,८०, ८९), को (११५), कूण (५२, ८१), के (२), कई (८४), कण (६८), केथि (११४), केहा (११४), को (८२,९०), गुड (१९), घणा (२), घमकी घमकी (३१), घो (९१), ज (५९,८३), जांण (६,१०,१३,४८,१००), जाणि (१८, ९७), जाण (२७,११७), जिहू के (५४ ११७), जु (४०), जे (२९,६९ ७०), जेता (८२) नेम (१०५) जेहा (११४) जेहो (११५), जेहो (९२) तणी तण तणौ (५९,९१ १२०,१२१), तव (७४,७५), तर (६६) तिक को (६४,१२०), ते (१९,५२,५६,६१), तोई (११६), तात्र (८२)तोर (५०) थोडी (११२), तो दिसी (६८ १२०), दुरतर (१२०) धारआग (७३), न (बहुप्रयुक्त), नको (४२), नयो (३८), नमो (८१), नहीं (४१ ४३, ५० ७७, ७८, ७९, ११६), नाही (४४,४५) नां (८२, १००), नित (४),, न (८४,१०१,१०६,१०८), नडो (५९), पछ (७३), पहेला (७८), पाछा आगो (८३), पाछ (७०), पास (११६) पासा (५५), पास (१०), पुणि (२२), पूर (१०८), बिचे (२३), बिचाळ (४), बगा (५५), बारबारा (१०३), मता (४२), म (२०,३५ ३९,७९,९२) मां (३९,७९), मानहू (३०) मांहे (२४,६५,९९), माहोमाह (३२), मूळ (५०), मूळ (५९), मोकळी (८), रुडी (९), रसाळी (९६), रीती (७०), लार (४१३) वळे (२५,३१,५७, १११, ११९) विहांण (१,४,६९), विहाण्यो (६७), विचाळ (१६,११९), वेगो (३७,११७) वुषा (७२), सम, समी (१५), सांकड (९८) सामहो (८०), सांमी (१२), सार (३), सारा (१०२), सिर (१,११२), हिव (१४, ७६,७७,८१), ही (५२), हुवक (४८), हे (८०), हेवां (३६)।

चतुर्थ अध्याय

नागदमण का काव्य-सौष्ठव

स्वरूपगत भेद को दृष्टि में रखते हुए प्राचीन संस्कृत आचार्यों ने श्रव्य काव्य को गद्य, पद्य, मिश्र नामक तीन वर्गों में विभाजित किया है एवं पद्य काव्य को भी महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य नामक तीन उपवर्गों में बांटा है। इन सब में प्रमुखता महाकाव्य को मिली। महाकाव्य के स्वरूप गठन का सर्व प्रथम विवेचन आचार्य भामह ने अपने काव्यालंकार नामक लक्षण ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है। तत्पश्चात् दण्डी, रुद्रट, हेमचन्द्राचार्य इत्यादि विद्वानों ने इसकी संक्षिप्त विवेचना की। महाकाव्य का सबसे सुन्दर एवं विस्तृत विवेचन आचार्य विश्वनाथ के साहित्यदर्पण में उपलब्ध है। खण्डकाव्य पर विचार करते हुए साहित्यदर्पणकार ने लिखा है—

खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च।

—साहित्यदर्पण, षष्ठ परिच्छेद श्लो० ३२९

अर्थात्—महाकाव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला खण्डकाव्य होता है। इस लक्षण के उपरांत भी खण्डकाव्य की स्वरूप गत विशेषता जानने के लिए महाकाव्य की विशेषताएं जानना शेष रह जाता है। इसके स्वरूप को जाने बिना खण्डकाव्य और महाकाव्य की सीमाएं निर्धारित करना असंभव है।

साहित्यदर्पणकार ने महाकाव्य के स्वरूप का विवेचन निम्न रूप से किया है —

१ महाकाव्य का कथानक सर्गों में विभाजित रहना है।
२ महाकाव्य का नायक कोई देवता या धीरोदात्त गुणों से समन्वित कोई उच्चकुलोत्पन्न क्षत्रिय होना चाहिए। एक ही वंश में उत्पन्न अनेक नरेश भी उसके नायक हो सकते हैं।
३ शृङ्गार, वीर तथा शांत में से कोई एक रस प्रधान होना चाहिए।
४ उसमें नाटक की समग्र संधियों (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, उपसंहृति) को स्थान प्राप्त हो।
५ महाकाव्य का कथानक या तो ऐतिहासिक होना चाहिए या

सज्जनाश्रित।

६ उसमे चार वर्गों (धम अर्थ काम मोक्ष) म से कोई एक फल स्वरूप मे होना चाहिए।

७ प्रारम्भ म नमस्कार, आशीर्वचन अथवा मुख्य कथा की ओर सकेत क रूप म मगलाचरण वतमान रहना है।

८ उसमे कहीं कहीं दुष्टों की निंदा और सज्जनों की प्रशसा होती है।

९ महाकाव्य क सर्गों की सख्या आठ से अधिक होनी चाहिए और इन सर्गों का आकार बहुत बड़ा या बहुत छोटा भी नहीं होना चाहिए। प्राय प्रत्येक सग मे एक ही छद का प्रयोग होता है और सर्गान्त म छद परिवतन अपेक्षित है। कहीं कहीं सग मे विविध छदों का प्रयोग भी हो सकता है। प्रत्येक सग क अत म आगत कथा की सूचना होनी चाहिए।

१० उसमे सध्या सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रदोष, अधकार, दिन, प्रात काल, मध्याह्न, मृगया, पवत, ऋतु, वन, समुद्र, सयोग, वियोग मुनि, स्वग, नगर, यज्ञ, युद्ध, यात्रा, विवाह, मत्रणा, पुत्रोत्पत्ति आदि का यथानुकूल सांगोपाग वणन होना चाहिए।

११ महाकाव्य का नामकरण कवि, कथावस्तु नायक अथवा किसी अन्य व्यक्ति के नाम क आधार पर होना चाहिए और सर्गों क नाम सगगत कथा क आधार पर होने चाहिए।

उपयु क्त लक्षणों को ध्यान म रखते हुए विचार किया जाय तो नागदमण मे महाकाव्य क अधिकांश गुण उपलब्ध हैं। नागदमण की कथा एक प्रख्यात पौराणिक कथा है। इसक कथानायक श्रीकृष्ण पूणब्रह्म परमेश्वर एव नायकोचित गुणों से सम्पन्न हैं। प्रारम्भ मे मुख्य कथा की ओर सकेतान्वित मगलाचरण विद्यमान है। समस्त काव्य म वीर रस अगीभूत है, वात्सल्य, शात रस सहायक रूप में प्रयुक्त हुए हैं। कथावस्तु—पांचों नाटकीय सधियों मे विभक्त है। सज्जन स्तुति एव खल निंदा का प्रसग यत्र तत्र आया है। प्रात काल, गो दोहन, गो चारण, कदुक क्रीडा सयोग, वियोग, सैन्यवणन, युद्ध इत्यादि प्रसगों का यथानुकूल वणन हुआ है। समग्र काव्य म मगलाचरण तथा कलश को छोडकर एक ही छद का प्रयोग हुआ है। इसका नाम कथावस्तु के आधार पर है। पुरुषाथ चतुष्टय फल के रूप मे प्राप्त है जिसे स्वय नागदमण कार ने यत्र तत्र स्वीकार किया है। इतना सब कुछ होते हुए भी यदि कोई त्रुटि है तो वह है—काव्य की सगहीनता और वस्तुसक्षेप। नागदमण की कथा का सबध मात्र एक दिन की घटना से है। इसमे समग्र जीवन की व्याख्या समुपस्थित करना कवि के लिए कठिन ही नहीं बल्कि असभव भी था। फिर भी सूला सांया ने अपनी काव्य प्रतिभा क बल से भगवान श्रीकृष्ण क लोकोप

धारक स्वरूप की चित्रमय झांकी उपस्थित करते हुए गोरक्षा का संदेश प्रस्तुत किया है वह किसी भी महाकाव्य से कम नहीं है। परन्तु शास्त्रीय दृष्टिकोण से यह खण्डकाव्य की ही परिधि में आता है।

नागदमण का रस-निरूपण

रसयुक्त वाक्य ही काव्य है[1]—कह कर रसवादियों ने रस की महत्ता प्रस्थापित की है। नागदमण वीर रस प्रधान काव्य है। झूला सांयाजी का भगवान श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त होते हुए भी वीर रसान्वित भगवच्चरित्र का व्याख्यान करना उनकी वंशगत विशेषता है। चारण कुल सदा से ही वीर भाव का विस्तारक रहा है। नागदमण का नेति नेति प्रक्रिया द्वारा चतुर्विध सै य तथा नहशास्त्र वर्णन उक्त परम्परा का सुन्दर निर्वाह है।

विभाव अनुभाव तथा सचारी भावों के संयोग से परिपुष्ट स्थायी भाव ही रस का स्वरूप ग्रहण करता है।[2] वीर रस का स्थायी भाव उत्साह माना गया है।[3] इसके दान, धर्म, युद्ध और दया यह चार भेद अलंकारिकों ने बताये हैं।[4] नागदमणमें अंगिरस स्वरूप युद्धवीरका वर्णन हुआ है। इसके आश्रय भगवान श्रीकृष्ण हैं और आलम्बन है कालिय नाग। नाग का विष-प्रभाव से यमुना के जल को दूषित करके गो तथा गोपाल समाज को हानि पहुंचाना और नागपत्नियों द्वारा भगवान को केवल साधारण बालक एवं कालिय को एक बहुत बड़ा वीर समझना, उद्दीपन है। कालिय के भयंकर आक्रमण के समय भगवान का निश्चल रह कर उसके प्रहारों को विफल करने की चेष्टाएं अनुभाव के रूप में वर्णित हैं। गर्व, तर्क, स्मृति इत्यादि संचारी भावों का यथा स्थान निरूपण हुआ है तथा वात्सल्य, करुण और रौद्र रसों का सहायक रसों के रूप में वर्णन है।

यद्यपि वर्ण्य विषय वस्तु के आधार पर नागदमण एक वीर रसान्वित खण्डकाव्य ही निर्णीत होता है। परन्तु कवि का अंतिम लक्ष्य भगवान श्रीकृष्ण की लीला गायन द्वारा सांसारिक दुःखों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्ति है। इसी कारणसे यह कृति भक्ति रसान्वित भी मानी जाएगी।

नागदमण में भक्तिरस

प्राचीन आचार्यों ने भक्ति को स्वतन्त्र रूप से रस की संज्ञा नहीं दी है। भक्ति रस के अंतर्गत भावरूप से इसका वर्णन है। देवता आदि विषयक रति को भाव कहा गया है[5] रस नहीं परन्तु यह बात कहां तक उचित है?

---

[1] वाक्य रसात्मकं काव्यम्—विश्वनाथ

[2] विभावेनानुभावेन व्यक्तः सञ्चारिणा तथा।
रसतामेति रत्यादिः स्थायी भावः सचेतसाम्॥—सा० द० परि० ३

[3] उत्साह स्थायी भावः —वही परि० ३

[4] स च दान धर्म युद्धै दया या समन्वितश्चतुर्धा स्यात —वही परि० ३

[5] रतिर्देवादि विषया व्यभिचारी तथाञ्जितः। भावःप्रोक्त ।—काव्य प्रकाश

भगवद्भक्त भागवत आदि के श्रवण से जो भक्ति रस का अनुभव करते हैं यह उपेक्षणीय नहीं। उस रस का आलंबन भगवान, पुराणादि श्रवण उद्दीपन, रोमांच आदि अनुभाव तथा हर्ष आदि संचारी है। स्थायी है—भगवद्विषयक प्रेम रूप भक्ति। इसका शांत रस में समावेश नहीं हो सकता। कारण यह कि—प्रेम, निर्वेद या वैराग्य के विरुद्ध है और वैराग्य ही शांत रस का स्थायी भाव है।[1]

ईश्वर में परम अनुरक्ति को भक्ति कहते हैं।[2] यह दो प्रकार की मानी गई है—रागानुगा और वैधी। वैधी से रागानुगा भक्ति को श्रेष्ठ माना गया है। इसके भी दो भेद हैं—कामरूपा और सम्बन्धरूपा। विषय सम्भोग तृष्णा को काम कहते हैं। इन्द्रियार्थ ही बद्ध जीव का विषय है। इसीलिए पण्डित लोग इसे काम कहा करते हैं। जिस जगह परमतत्त्व भगवान, विषय रूप में वरण किए जाते हैं, उस जगह विषय सम्भोग तृष्णा को प्रेम कहा जाता है। काम और प्रेम में स्वरूपगत भेद नहीं है, केवल विषयमात्र का भेद है।[3]

प्रेमासक्ति की दो अवस्थाएं होती हैं—भाव और प्रेम। आलंकारिक देवादि विषयक रति को भाव कहते हैं रस नहीं यह पहले प्रकट किया जा चुका है। पर वैष्णव भक्तों का भाव उससे भिन्न है। जहां आलंकारिक कृष्ण संबंधी रति को केवल भाव कहते रस नहीं, वहां भक्ति शास्त्री उसे रस भी कह सकते हैं। भाव शुद्ध रति है। आलंकारिकों की रति से यह रति भिन्न प्रकार की है। स्त्री पुत्रादिक के प्रति जो रति है यह बद्ध जीव की जड़ विषया रति है। पर श्रीकृष्ण के प्रति भक्त की रति चिद्विषया होती है।[4] अर्थात आलंकारिकों के रस जड़ोन्मुख हैं और भक्तों के रस ईश्वरोन्मुख" यही दोनों में भेद है।

भक्तिरस शास्त्रियों के मतानुसार भक्तिरस व्यापार में निम्नांकित पांच भाव होते हैं—१ स्थायी भाव, २ विभाव, ३ अनुभाव, ४ सात्विक भाव और ५ संचारी भाव। इनकी परिभाषाएं आलंकारिकों जैसी ही होती हैं। स्थायीभाव नाम प्राप्त रति, विभाव अनुभाव, सात्विक तथा व्यभिचारी भावों से परिपुष्ट होकर पांच स्वभावों को ग्रहण करती है तथा उसी के अनुसार रति के पांच भेद होते हैं जैसा कि निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है—

---

[1] श्री रामदहिन मिश्र—काव्य दर्पण पृ० २१२

[2] अ—सा परा अनुरक्ति ईश्वरे। —शाण्डिल्य सूत्र

आ—सा तु अस्मिन् परम प्रेम रूपा। —नारद भक्ति सूत्र

[3] श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी—सूर साहित्य पृ० ३२

[4] श्री श्रीचैतन्य शिक्षामृत पृ० २१०–२११

[5] डा० रामरतन भटनागर—हिन्दी भक्ति साहित्य पृ० ८८

स्वभाव	शांत	दास्य	वात्सल्य	सख्य	शृंगार
स्थायी	शांतरति	दास्य रति	वात्सल्य रति	सख्य रति	मधुरा रति
आलम्बन	परब्रह्मत्व	सर्वेश्वरत्व	सुकुमारत्व	सुजानत्व	मनहरणत्व
उद्दीपन	एकांतध्यान	नमस्कार वंदन	बाल सुलभ चेष्टाएं	क्रीडा	वसंत ऋतु, वस्त्राभूषण
सात्विक अनु०	मूर्च्छा के अतिरिक्त स्तम्भादि आठों	स्तम्भादि आठों	स्तम्भादि आठों	स्तम्भादि आठों	स्तम्भादि आठों
संचारी	मति, धृति, निर्वेद, स्मृति	हर्ष, गर्व, चिंता, मति, धृति, निर्वेद, तर्क, शंका, दीनता तथा विप्रलम्भ के अन्य संचारी	दास्य की तरह	दास्य की तरह	दास्य की तरह
नागदमण में वर्णन	आरम्भ तथा अंत की स्तुति एवं यमुना द्वारा स्तुति का वर्णन	नागपत्नियों द्वारा पूजा अर्चा का वर्णन	गोप पत्नियों के स्वरूप दर्शन एवं कथोपकथन का वर्णन	गोचारण के समय यमुना तट पर कंदुक-क्रीडा का वर्णन	नागपत्नियों द्वारा स्वरूप दर्शन तथा कथोपकथन का वर्णन

रागानुगा भक्ति को प्रेम भक्ति की पुष्टिकारिणी समझकर इसे पुष्टिमार्ग की संज्ञा दी गई है। आचार्य वल्लभ इसके प्रबल प्रचारक रहे हैं। इन्होंने विजयनगर के राजा कृष्णदेव की सभा में शैवों को पराजित करने के उपरांत दक्षिण से वृन्दावन आकर गोवर्द्धन पर श्रीनाथजी के मंदिर की स्थापना की तथा अपने उपास्य बालकृष्ण (श्रीनाथजी) के नित्य तथा नैमित्तिक आचारों द्वारा सेवा का प्रबन्ध किया। वल्लभकुल सम्प्रदाय में यही प्रणाली वर्तमान तक गृहीत है।

मूला सापाजी भी बालकृष्ण (श्रीनाथजी) के अनन्य भक्त थे। आचार्य वल्लभ द्वारा प्रतिष्ठापित नित्याचार हरिसेवा का वर्णन इन्होंने नागदमण में बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है—

आचार्य वल्लभ द्वारा प्रतिष्ठापित आठों प्रहर की सेवा तथा नागदमणकार की वर्णनसूचक तालिका—

क्रम	सेवा का नाम	समय	भाव	नागदमणकार का वर्णन
१	मंगला	प्रात ५ से ७ बजे तक	अनुराग के पद, जगाने के पद, और दधि मथन के पद	विहाणू नन्दनाथ जागो वहेला इत्यादि छंद सं० १
२	शृंगार	७ से ८ बजे तक	बाल रूप सौंदर्य, वेश भूषा, बाल क्रीडा के पद	लिया सार सिणगार गोपाळ नीला इत्यादि छंद सं० ३
३	ग्वाल	८ से १० बजे तक	सख्यभाव चौगान, गोचरण आदि के पद	नरवां माण सिंदूर भारण माळ इत्यादि छंद संख्या ४ से ७ तक
४	राजभोग	१० से १२ बजे तक	छाक के पद	जिमाव जिके भावता भोग जाणी इत्यादि छं० सं० २
५	उत्थापन	सायं ३ से ४ बजे तक	लीला के पद	वई बांसळी सांगळी नादवा तां इत्यादि छंद सं० ८ से १२ तक
६	भोग	सायं ५ बजे	कृष्ण रूप, गोपीदशा, मुरली, रूप माधुरी, गाय गोप आदि के पद	अचाणक ऊभो दरबार आय— इत्यादि छंद सं० २१ से ११९ तक सभी भावों का वर्णन है।
७	संध्या	६ ३० बजे	गो ग्वाल सहित वन से आगमन, गोदोहन प्रथा, वात्सल्यभाव से यशोदा का भुलावना आदि के पद	महाकाळ पाळो तणो माण मोडो, जसोदा दिसी आवियो पारण जोडो। छं०सं० १२०
८	शयन	७ से ८ बजे तक	अनुराग के पद तथा संयोग शृंगार के पद	रम्यो नृत्य राधारमण छंद सं० १२२ में केवल संकेत किया है।

विशेष—नागदमणकार ने व्रजभाषा का सर्वांग सुन्दर [illegible] पहले लिखा है। यह तत्कालीन गोप-समाज व क्रियाकलाप का प्रभाव है। वर्तमान में भी गोप समाज का क्रियाकलाप नागदमणकार के वर्णनानुसार ही सम्पादित होता है। यथा (१) प्रातःकाल उठना, (२) कलेवा, (३) गोचारण सामग्री तथा परिधान, (४) ग्वालों के साथ वन गमन, (५) क्रीडा, (६) मध्याह्न भोजन, (७) सायंकाल में गायों सहित वन से आगमन, (८) भोजन शयन।

अलंकार

रस या व्यंग्य के पश्चात् यदि काव्य में किसी और का महत्त्व है तो अलंकारों का। 'अलम्' का अर्थ है भूषण। जो अलंकृत करे वह अलंकार जिसके द्वारा अलंकृत किया जाय इस कारण व्युत्पत्ति से उपमा आदि का ग्रहण हो जाता है।[1]

अलंकारों का उपयोग सौंदर्य-वृद्धि के लिए किया जाता है। यह सौंदर्य भावों का हो या उनकी अभिव्यक्ति का। भावों को सजाना, उन्हें रमणीयता प्रदान करना अलंकारों का काम है और दूसरा काम है भावों की अभिव्यक्ति को प्राञ्जल करना व उसे प्रभावशाली बनाना।[2]

रस सिद्ध कवियों को अपनी रचनाओं में अलंकारों के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। ध्वन्यालोक के मतानुसार— निष्पद्यमान रसों की अभिव्यक्तियों को जोड़ने पर भी प्रतिभाशाली कवियों के समक्ष अलंकार प्रथम स्थान ग्रहण करने को अपने आपको हम पहले हम पहले कहते हुए टूटे से पड़ते हैं।[3]

कविजनोचित संस्कार पूर्णतः बलवान होने के कारण नागदमणकार को अलंकारों के लिए प्रयास नहीं करना पड़ा है। नागदमण में डिंगल के वयणसगाई जैसे क्लिष्ट परन्तु अनिवार्य शब्दालंकार का सर्वत्र सुन्दर निर्वाह हुआ है। वयणसगाई के सफल प्रयोग से अन्य समस्त काव्यगत दोषों का परिहार हो जाता है।[4] अन्य उपमा आदि अर्थालंकारों का प्रयोग भी यथा-स्थान हुआ है तथा मूल भावों की उत्प्रेक्षाएं तो अलंकारों में अपना एक

---

[1] अलंकृतिः अलंकारः करणव्युत्पत्त्या पुनः अलंकार शब्दोऽयमुपमादिषु वर्तते
—वामन वृत्ति

[2] श्री रामदहिन मिश्र—काव्य दर्पण पृ० ३२८

[3] अलंकारान्तराणि हि निरूप्यमाणदुर्घटान्यपि रससमाहितचेतसः प्रतिभानवतः कवेः अहंपूर्विकया परापतन्ति —ध्वन्यालोक

[4] आदी अंत मध्य अखर, वयणसगाई वेस
दोष [illegible] —कविमंछ—रघुनाथ रूपक गीतां रो
पृ० १२

...साहित्य के प्रमुख अलंकार वयणसगाई का आवश्यक समझकर सर्वप्रथम निरूपण किया जा रहा है।

उत्तम, मध्यम और अधम प्रकार भेद से वयणसगाई को तीन वर्गों में रखा गया है। उत्तम के भी आदिमेल, मध्यमेल और अन्तमेल नामक तीन उपभेद माने गए हैं।[1] इनको अधिक अखरोट, सम अखरोट और न्यून अखरोट भी कहते हैं।[2] अरध अखरोट एक चौथा भेद भी कहीं कहीं मिलता है।[3] नागदमण में वयणसगाई के सभी भेदोपभेदों का व्यवहार हुआ है। यथा–

आदिमेल—चरण में प्रथम वाक्य के आदिवर्ण की आवृत्ति उसी चरण के अन्तिम वाक्य के आदि में होती है।

उदाहरण— विहाणू, नवो नाथ जागो वहेला,
हुवो दोहिवा धेनु गोवाळ हेला।
जगाड जसोदा जदुनाथ जाग,
मही माट घूम नवनीत मांग ॥ छं० १

विशेष—उक्त उदाहरण में व व, ह ह, ज ज तथा म म की आवृत्ति दर्शनीय है।

मध्यमेल— चरण के प्रथम वाक्य के आदिवर्ण की आवृत्ति उसी चरण के अन्तिम वाक्य के मध्य में होती है।

उदाहरण— १ सारद करो पसाय। छंद १
२ लियो लकडी कथ ऊभा हुलासे। ,, १०
३ रीतो बाहुड़ जे अहीरयो घरांन। ,, ७०
४ पडीव विहू नीसव जा अपावो। ,, ७८
५ होहि गोपर असुरारि। ,, १२२

अधमेल—चरण में प्रथम वाक्य के आदि वर्ण की आवृत्ति उसी चरण के अतिम वाक्य के अत मे होती है।

उदाहरण— तव नइर्र नैस बलभद्र न हुता। छंद ७५

अरधमेल—चरण मे प्रथम वाक्य के आदिवर्ण की आवृत्ति उसी चरण के

---

[1] वयणसगाई तीन विध, आद मध्य तुक अत।
मध्यमेल हरि महमहण, तारण दास अनत ॥
आढा किसनाजी—रघुवरजस प्रकाश पृ० १८२

[2] वरण मित्र सु चरण विध, कवियण तीन कहंत।
आद अधिक सम मध अवर, न्यून अंक सो अंत ॥
कवि मछ—रघुनाथ रूपक पृ० ३४

[3] अरध मेल असरोट इक, चल तुक रिण कवि चाल
कवि मछ —वही पृ० ३५

मध्य वाक्यों में होती है।

उदाहरण—१ वलद् व बून्यो दिखाळ यो सुदामा। छंद १९

२ हाहाकार हक्कार ससार सार। " १५

३ सब सुदरी सुदरी देखि मोही। " २५

४ ढळक्कतडो ढाल नेजा न धज्जा। " ४९

५ त्रिलोकी न भ्रासई वीहा ओ न बूझ। " ८८

६ धणी बात सावावधी कोड काला। " ८९

मध्यम कोटि की वयणसगाई मे असमान स्वरों, तथा स्वरों के साथ य, व, अथवा ह का मेल होता है। यथा—

उदाहरण—१ आप अघाणो अगल। दूहा ३

२ इक्को वेयटो चोवट आय ऊमो। छंद ६

३ ऊमा गाय गोवाळ सूरत आर। " १५

४ इल बाळ गोपाल पामो अचमा। " २१

५ इस नासिका सिध्य दीपक ऐरी। " २६

६ अमारा भगत्ता तणां एह ओरा। " ५८

७ उद डींगळा पींगळा रा अगारा। " १०३

८ ऐरी ओवोन वेलो चसे म हेरी। " ८६

अधमकोटि की वयणसगाई मे विभिन्न वर्गों जसे 'ट' वग और 'त' वग अथवा अल्पप्राण और महाप्राण वर्णों का मेल होता है। यथा—

उदाहरण—१ दडो लार काहो घव्यो वृच्छ डाली। छंद १३

२ तब मदरी लार आहीर ढोला। " १७

३ दरब्बार काळी तणी मेल्हि डावो। " ३८

४ ढळक्कतडो ढाल नेजा न धज्जा। " ४९

५ जाल प्रन्स नीला बह त्रिसल माळा। " ५०

६ फणिनाथ न भ्रालखू ऐण पाणी। " ५५

७ समर्ा देव मोटा अमा मत थोडी। " ११२

नागदमण मे उक्त वयणसगाई के अतिरिक्त—छेकानुप्रास, वृत्यनुप्रास, श्रुत्यनुप्रास, लाटानुप्रास अत्यानुप्रास, पुनरुक्ति, वक्रोक्ति इत्यादि शब्दालकारों के उदाहरण यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होते हैं तथा उपमादि अर्थालकारों का व्यवहार भी यथास्थान हुआ है। कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

उपमा—

१ सुण्यो यात आघात माता सनेही,
जसोदा ढळी कदळी सम जेही। छंद १६

२ नहीं नागणी बोल एहा निवास
बस रसण डसण विस्त्रवास। " ३५

रूपक—	१	मुण्यो घात आघात	पद १६
	२	[illegible] ।	,, ५०
	३	उड झींगळां पींगळारा जगारा ।	,, १०३
	४	समद्रा पार संसार होहि गोपन्ज अणुहारो ।	,, १२२
उत्प्रेक्षा—	१	हुई न्दरी धेन सु धेन हेला, मिल वाळ्या जाणि थोगण मेळा ।	,, ६
	२	पुळी भर नीसार आवी प्रहट्ट । त्रिवेणी उलट्टीय समद्र तट्ट ।	,, ७
	३	कालिन्गी तण आई लोटत कांठ, गयो जाणि चिंतामणि रक गांठ ।	,, १६
	४	इख नासिका सिद्ध दीपक्र तेरी, वळी धप जाण स्ठी लप करी ।	,, २६
	५	अली सहुली जाणि दिधी अलक्ष ।	,, २७
	६	पेर्यो नहरो थोट अहिफोट एहो, जळाबोळ मांह वळा सोळ जेहो ।	,, ९९
	७	गोपीनाथरा हाथ आया गदह अहो गारडी जाणि छाट उडह ।	,, १००
	८	अहो मूठ धाज भिरा नां उपाड अहो गारडू जाणि काळी रमाड ।	,, १०
	९	काळी नागरा नाह संभाळ वेधा, लधी जाण मूटयो वधी मच्छ लेवा ।	,, १३
असम—		महा लक्ष्मिया निधि जाण्म मोटा, खरो हेक तू ही बिया सर्व खोटा ।	,, ११४
अतिशयोक्ति—		जाळ बिहव नीला धट्टे विरल झाळा वदन सहस्री धध व्योम व्याळा । यहा शृङ्ग सोतग हेमग थाळा, जिरी फूक आग भर टूक फाला ॥	,, ५३
रूपकातिशयोक्ति—	१	महाकाळ काळी नको वाळ मान, पडी दोतडी याज हो वाघ पान ।	,, ३६
	२	जुड रूप तीन श्रणाव्रत जेहा, कुहाडा श्रणा ऊपरां मार वेहा ।	,, ११४
व्याजस्तुति—	१	मनासू न मूकइ घडी हेक मामो, कर सूर ऊगां तणो नित्य सामो ।	,, ५९

२ प्रिया तात न गोत्र थारा पिछाण्या,
वडा गोपरो पुत्र आयो विहाण्या । छंद ६७
३ जोवो नदर ग्रह सम्वट जागी,
हिव लागवा सक श्री लोक सागी । " ७६

नागदमण म प्रयुक्त छंद

नागदमण काव्य मे प्रारम्भ के चार दोहों तथा अन्त के एक प्रसंग के अतिरिक्त सर्वत्र भुजंगप्रयात छंद का व्यवहार हुआ है । भुजंगप्रयात सुप्रसिद्ध समवर्णिक छंद है जिसका लक्षण राजस्थानी छंदशास्त्र म इस प्रकार दिया गया है—

च्यार यगण पद प्रत चवा, छंद भुजंगप्रयात ।
आठा किसनाजो रघुवर जस प्रकास पृ० १३६

नागदमण के सवाद और उक्ति वैचित्र्य

नागदमण का विशेष महत्व उसके वर्णन और सवादों के कारण है । × × × × विशेषतया नागणी और कृष्ण के सवादों म माधुर्य, वात्सल्य, आश्चर्य, भय उत्साह आदि भावों का एक साथ सुन्दर सामञ्जस्य मिलता है । वे बड़े फबते हुए और उपयुक्त हैं । [1]कवि को प्रकृति चित्रण करते हुए काव्य के अनुकूल वातावरण प्रस्तुत करने में विशेष सफलता मिली है ।[2] सफल सवादों का विवरण इस प्रकार है—

१ नागणी और कृष्ण सवाद— छंद ३० ५५
२ नागणी और यमुना सवाद— " ५६
३ नागणी और कृष्ण सवाद— " ५७ ८४
४ नागणी और अन्य स्त्री सवाद " ८, ९३

उक्त सवादों में तथा वर्णनों मे लोकोक्तियां और मुहावरे मणिकांचन योग स्वरूप प्रयुक्त हुए हैं जो भाषा की सजीवता तथा सौन्दर्य वृद्धि के मूल उपादान समझे जाते हैं । कतिपय सफल प्रयोग द्रष्टव्य हैं—

१ वईकुंठ र नाथ री विचारी ।
२ रम मग गावाळिया रगराती । छंद १
३ मन्यो दूसरो मेल खेटन माय,
हिव जनरा वात गोवाळ हाय । " ११
४ पणा भोम चाली चढी वात घोड । " १४
५ लिपा जीह दत नहीं लोक लोपी
गुड गाय गावाळ मूरत्य गोपी " १५
" १९

---

[1]श्री मोतीलालजी मेनारिया—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृष्ठ १२२
[2]श्री पुरुषोत्तमजी मेनारिया—रुक्मिणीहरण [प्रस्तावना] पृष्ठ २६

६ बुगाय मळ नाय नांरी भुरवरी । छंद ३२
७ काळीनागसू सीनिए वमि पानो
पड्यो तान गोम पड़ मात पानों । ,, ३४
८ रजीत इसा मान नाय रड़ाळा,
षवीज नहीं धोन ज बाळवाळा । ,, ३७
९ दरन्वार षाळी तणो मेलिह डायो । ,, ३८
१० मरीज नहीं आम सू साय भोळा । ,, ३९
११ बपारया न थार अन वाळ याळा । ,, ३९
१२ अंज मुख प पान री सोगि आव । ,, ४०
१३ हारियां ओगिया करतार हाप । ,, ४१
१४ सुतो साप जगाडीज वेण कोन । , ६८
१५ मिता मातरो औधणी पवन्यानो
मोरयारो हुई घुघरी साप मानो । ,, ७०
१६ लला तू नहीं लेह धूवत लूणी । ,, ७१
१७ अमा पय दांडा सणो थार आम । ,, ७३
१८ मिळ कसरा घूत पाणी न साग । ,, ७५
१९ मिळ दादुरा मेह तो सांच मान । ,, ७६
२० षवीजे नहीं जगळा जाट राणी । ,, ७९
२१ किसू आपरो मोल आपे कराव । , ८०
२२ नरां नारी को नागणी नो वियाणी,
रही वांझडा देव दाणव्व राणी । ,, ८२
२३ नारी गाळियो सू ठ दूनो न सायो
जणणी किणी हेक तू ही ज जायो । ,, ८३
२४ गिणो बाद जोता केई कोड गाडा । ,, ८४
२५ सनो वाळ एन त्रिभुवन्न सूझ । ,, ८८
२६ प्रभू अग लागी सोई फूल पाग्नी । ,, ९९
२७ स्रोकांहो विचाळ प्रभू लीक लाग,
अहेडा सुण्या साप रा वेधि साग । ,, ११४

नागदमणयार का काव्यगत संदेश

सूला सांयाजी ने प्रस्तुत काव्य में भगवान श्रीकृष्ण के सर्वेश्वर भक्तिभाव के साथ साथ गो संरक्षण के महत्त्व का भी प्रतिपादित किया है। भारतवर्ष में प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान तक गो संरक्षण को एक धार्मिक अनुष्ठान के रूप में माना गया है। अनेकानेक भारतीय वीरों ने समय समय पर अपने प्राणों

की बाजी लगाकर गो रक्षा के महत्त्व को अक्षुण्ण रखा है। वैज्ञानिकदृष्टि से भी गो रक्षा का महत्त्व कम नहीं है। भारत एक कृषिप्रधान देश है। गाय इस देश की सर्वोपरि राष्ट्रीय निधि है। गायों के द्वारा दूध, दही, घृत इत्यादि अमृतोपम पुष्टिकर आहार तो उपलब्ध होता ही है साथ ही साथ कृषि कार्य के सम्पादनार्थ बैल भी गायों द्वारा ही प्राप्त होते हैं। इस प्रकार की राष्ट्रीय-निधि का दुरुपयोग होना, नष्ट होना देश का दुर्भाग्यसूचक लक्षण है। जिस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण गो रक्षा निमित्त महाकालस्वरूप कालिय नाग से लोहा लेने में नहीं हिचकिचाये उसी प्रकार भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है कि गो संरक्षण के लिए यदि काल से भी टक्कर लेनी पड़ जाय तो उसमें आनाकानी न करें, इसी में राष्ट्र का कल्याण है।

झूला सायाजी
कृत
नागदमण

मूलपाठ
महत्त्वपूर्ण पाठभेद
शब्दार्थ एवं भावार्थ

अथ श्री नागदमण लिख्यते

दूहा

वळ[1] वा सादर[2] वरणवू[3], सारद[4] करो पसाय ।
पवाडो[5] पनगा सिरै[6], जदुपति कीधो[7] जाय ॥ १ ॥

प्रभू घणा[1] चा पाडिया, दत वडा चा दत ।
घे पालणै पोढिया, के पय पान करत ॥ २ ॥

किणै न दीठो कानवो[1], सुण्यो न लीला सध[2] ।
आप वधाणो[3] ऊन्नळै, वीजा छोडण वध ॥ ३ ॥

अवनी भार उनारवा, जाग्यो[1] एण जुगत्ति ।
नाथि[2] विहाण नित[3] नव नव विहाण नत्ति ॥ ४ ॥

छंद भुजंगप्रयात

विहाणू[1] नवो नाथ जागो वहेला[2]
हुयो[3] दोहिवा[4] धेनु, गोवाळ हला[5] ।
जगाडे जसोदा जदूनाथ जागै[6],
मही माट घूमै, नवनीत[7] मागै[8] ॥ १ ॥

---

१ [1]वळतो [ख ग], वांणी वाज वरणवा [घ], विधि [ङ] [2] सारद [ग, ङ] [3]वीनवु [ख ग घ ङ], [4] सादर [ग], [5] पवाडु [ख] पुवाडा [ग], [6] सरस्य [ख], सरस [ग], [7] कीनो [ङ घ] ।

२ [1]घणाय पाडिया [ख] घणाई [ग], [2] पालाण [ङ]।

३ [1]कान्हुआ [ख], [2] सुध [ग] [3] वधाव [ख] ।

४ [1]आयो [ग ङ],[2] नाथ [ग ङ घ],[3] नवेनित [ख] ।

१ [1] विहाणे [ङ], [2] वहिला [ख], [3] दीयो [ख घ], [4] दूहवा [घ], दोडिवा [ङ], [5] हिला [ख], [6] जागो [ख घ ङ], [7] नवनिद्धि [ङ], [8] मांगो [ङ] ।

अथ श्री नागदमण

दोहे

हे शारदा ! आप मेरे पर अनुग्रह कीजिये जिससे मैं यदुपति श्रीकृष्ण ने कालिय नाग के सिर पर चढकर जो पराक्रमपूर्वक युद्ध चरित्र किया, उसका सादर वर्णन कर सकू ।१।

प्रभु श्रीकृष्ण ने अनेक बड बडे दैत्यों के—कइया के पलने मे सोते हुए और कइया के स्तनपान करते हुए, दांत उखाड डाले (नष्ट कर दिये) ।२।

भगवान श्रीकृष्ण के लीलायुक्त चरित्र ऐसे हैं जो न तो देखे गये हैं और न सुने गये हैं। दूसरों को बंधनमुक्त करने वाले स्वयं ओखली से बंधे हैं ।३।

भगवान श्रीकृष्ण भूमि का भार उतारने के लिए इस रूप मे प्रकट हुए हैं कि—नित्य प्रात काल मे नवीन नवीन उच्छृंखल व्यक्तियों को अपने वश मे कर लेते हैं ।४।

भुजगप्रयात छंद

हे नाथ ! प्रात काल मे गायों को दुहने के लिए ग्वालों की पुकार हो रही है अत शीघ्र जागिए। इस प्रकार जसोदा के जगाने पर यदुपति श्रीकृष्ण जागे और मटके मे दही मथते देख कर नवनीत मागने लगे ।१।

---

१ बळ=पराक्रम। वो=वह। सारद=शारदा। पसाव=अनुग्रह। पवाडो=युद्ध चरित्र। पनगां=सर्प के। सिर=ऊपर। कीधो=किया।

२ घणां धा=अनेकों के। पाड़िया=उखाडे। वडा=मोटे। के=कइयों के। पोढियां=सोते हुए। पय=दूध। करंत=करते हुए।

३ किणे न=किसी ने भी नहीं। दीठो=देखा। लीला-सध=लीला-युक्त। बीजां=दूसरों के। बंध=पाश।

४ अवनी=पृथ्वी। भार=बोझ। जाग्यो=प्रकट हुआ। एण=इस प्रकार। जुगति=युक्ति, रूप। नाथि विहाण=निरंकुश, उच्छृंखल। नव=नवीन, नमस्कार करते हैं। विहांण=प्रात काल नथि=वश में कर लेते हैं।

१ विहाणू=प्रात काल। नवो=नवीन। वहेगा=शीघ्र। दोहिवा=दुहने के लिये। हेला=पुकार। जगाडे=जगाये। नवनीत=मक्खन।

जिमाव[1] जिव भावता भोग जाणि
   परम जसादा जिम[2] चक्रपाणी ।
अराग अघाये कियो[3] आचमन,
   कपूरी[4] ग्रह पान बीडा[5] प्रसन्न ॥ २ ॥

लिया सार[1] मिगार[2] गोचार लीना,
   कर आज का[2] जम्मुना तट्ट कीला ।
सुण्या साम आगम्म[3] ऊभी महली,
   हुरखा हुरखा हुवली हुवेली ॥ ३ ॥

भरया[1] माग सिंदूर मारग्ग भाळै,
   वहै सामलो व्रज सेरी विचाळै ।
वहै आर ग्वार पिछार वाळ,
   ज्या नेह सू तेह[3] गोपी निहाळ ॥ ४ ॥

हरीहो[1] हरीहो हरी[2], धेन हाक,
   झरूखा चढी नंदकुम्मार[3] थाक[4] ।
अहीराणिया अब्बला[5] झूल आवै,
   भगव्वान न धेन गोप्या भळाव[6] ॥ ५ ॥

इकी[1] वेवटी चोवट[2] आय ऊभी
   मभाली[3] लियो स्याम[4] मोरी[5] सुरम्भी[6] ।
हुई[7] नदरी धेन मू धेन[8] हला
   भिळै[9] वाळरा[10] जाणि श्रीरंग भेळा ॥ ६ ॥

---

२ [1] जिमाड [ग] जिमाडो [ड], [2] जमो [ड], [3] किये [ख ग घ], [4] कपूरे [ख ग घ], [5] बीडी [घ] ।

३ [1] सार [ख], [2] साजरो [ड], [3] बाग [ख ग घ] ।

४ [1] भरि [ख], भरे [ड], [2] सेवार [ड] सवार [ग], [3] देह [ख ग ड] ।

५ [1] हरीहे हरीहे [ख ग], [2] वेहरी [ख], [3] कुवार [ग], [4] भाख [ख], [5] पावलो [ख] पावला [ग], [6] भुलाव [ग] ।

६ [1] इकु [ख], एके [ग], [2] चुवटे [ख], [3] सभाले [ख ग], [4] नाथ [ख ग], [5] गोपी [ग], [6] सखी [ग], [7] हुव [ख ग], [8] गोवाळ हुन्ना [ड] । [9] भेला [ख], [10] बाहुला [ख] ।

श्रीकृष्ण को जो जो व्यंजन रुचिकर हैं वह ही परोस कर यशोदाजी भोजन करवा रही हैं। तृप्त होकर भोजन कर लेने के पश्चात् भगवान श्रीकृष्ण ने आचमन किया और कपूरी पान का बीडा ग्रहण किया। २।

भगवान श्रीकृष्ण ने गोचारण का शृङ्गार प्रसाधन कर लिये क्योंकि आज वे यमुना-तट पर कोई खेल करेंगे। उनका आगमन सुन कर गोकुल बालाएं प्रत्येक मकान पर उन्हें देखने को खडी हो गई।३।

श्यामल गात्र श्रीकृष्ण व्रज की गली मे चल रहे हैं और उनके पीछे दुधमुहे बछडे तथा बाल ग्वाल चल रहे हैं जिन्हें मांग मे सिंदूर भरे गोपियां नूतन स्नेह सिक्त होकर मार्ग मे देख रही हैं।४।

भगवान श्रीकृष्ण हरी हो! हरी हो!! कहते हुए गायों को हांक रहे हैं। इधर अहोरनियां झरोखों पर चढ़ी नंदकुमार को देख रही है। उधर अहीरनियों का सुन्दर समूह तथा गोपिकाएं आकर अपनी अपनी गायें श्रीकृष्ण को सम्हला रही हैं।५।

इक्की दुक्की गोप बाला चौराहे पर आकर खडी हो गई और भगवान से कहने लगी कि—श्याम! मेरी गाय को सम्हाल लेना। नंद के गो-समूह के साथ अन्य गायें इस प्रकार आ-आ कर मिल रही हैं मानों नाले आ आ कर श्रीगंगा मे मिल रहे हों। ६।

---

२ भावता=रुचिकर। भोग=भोजन सामग्री, व्यंजन। जिमैं=खाते हैं। चक्रपाणी=सुदर्शनधारी श्रीकृष्ण। परोग=भोजन किया। धपाय=तृप्त हुए। आचमन=हाथ धोना, पानी। ग्रहै=लिये।

३ लिया सार=कर लिया, सम्हाल कर लिया। सिंगार=शृङ्गार। गोचार लीला=गोचारण लीला के। का=कोई। तट्ट=किनारे। कीना=खेल। आगम्म=आना। हरखा हेरवा=देखने के लिए। हवेली हवेली=मकान मकान पर।

४ भरया=भरे हुए। मारग=मार्ग। भाळ=देख रही हैं। व्रज सेरी=व्रज का गली। बिचाळ=मध्य मे। पार=पीछे। दुध्वार=दुधमुंहे बछड़े। भिडार=गोप। तेह=उनको, सिक्त। निहाळ=निहार रही हैं।

५ हरी=भगवान कृष्ण। धेन=गाय। झरूखां=वातायनों। झांकै=देख रही हैं। सुन्दर झूम=सुन्दर समूह। सम्हाव=सम्हला रही हैं।

६ इकी बकी=इक्की-दुक्की। चौवटे=चौराहे पर। ऊभी=खड़ी रह गई, ठहरी। साम=श्याम। सुरभी=गाय। हेना=सम्मिलित। मिळै=मिलते हैं। बाळा=नाले। जाणि=मानो। भेला=साथ।

पुळी[1] नै'र[2] नीसार आवी[3] प्रहटटै,
त्रिवेणी उळट्टीय[4] ममद्र[5] तट्ट ।
महव्वत सोधा[6] तणी सोढ[7] माथ,
हरी मजरी[8] तिल्लन वेण[9] हाथै ॥ ७ ॥
वई[1] वासळो सिग्गळो नादवा[3] ता ।
गळै माळ गुंजा[4] व्रज वाळ गाना ।
सव आमरा[5] सामरा प्रत्य सद्दा,
जमूना तण तीर[6] आहीर जद्दा ॥ ८ ॥
रमेवा राव[1] गाय सू हेव राग ,
रहे[3] कीजियै वाह भोम विभाग[4] ।
वर्दगु ठ रै नाय रहो[5] विचारी[6]
क्रिया मारग्गा लोक[7] वहू[8] विनारो ॥ ९ ॥
पल पार[1] पिडार था दोहू पास,
लिया[3] लक्कडी कध[4] ऊभा हुलास ।
घड़-गेडिय गेंद मदान घेरी[5],
घणी घूमर डग्गर घेर घेरी[6] ॥ १० ॥
झिलै आवता ऊल्ट[1] हक- झेर
फिरी राम चोटा कहो[3] दोट फेर ।
मझी आवरो[4] माझिया[5] सेल मानो
रमै सग गोवाळिया रगराता ॥ ११ ॥

---

७ [1] पुरे [ग], पुरा [घ], परे [ड] - नयर [ख] नगरे] [ग] [3] कीधा [ख ग], कीधो [घ] [4] फिरउनरा [ख], फिरउलस [ग], [5] सिधु [ख ग] [6] सुधा [ख], नुधा [ग], [7] सोढ [ङ], [8] मुदडी [ग च], [9] वीण [ख] ।

८ [1] वाह [ख ग] [2] सगना [ग], सगली [ग] [3] हेवराता [ख ग], [4] व्रज वाल गोवार गाता [ख] [5] प्रापुना [ख], [6] नीर [ड] ।

९ [1] सम [ड], [2] रगा [ख] [3] वही [ख], [4] विमगा [ख] [5] सारी [ख ग], [6] विस्तारी [ख], [7] जाय [ख ग], [8] दुहै [ख] दोनू [ग] वेत्रे [ड] ।

१० [1] बाल [क], [2] दोय [ड], [3] किया लाकडी वध गेभो कला से [ख ग ट] [4] गज [ख], [5] घेर [ग] [6] फेरो [ड] ।

११ [1] उलटा [ख ग] [2] दोट [ख ग], [3] करे [ग ड], तणी (घ), [4] पाकुडे [ग], पाकडो [ड], [5] हेसते [ग] ।

सारी गायें चल पड़ीं और नगर से निकल कर समतल भूमि में आ गई जैसे सागरतट पर त्रिवेणी उलट आई हो। श्रीकृष्ण तिलकयुक्त मस्तक पर हरी तुलसी और सोंधा की सुवासित सुगंधि धारण किये तथा हाथों में बांसुरी लिये आ रहे हैं।७।

बांसुरी एवं सींगी के बजने की ध्वनि हुई। ब्रज बालकों के शरीर पर गुंजाओं की मालाएं शोभित हो रही थीं। इधर उधर वाले सारे गोप-बालक यमुना तट पर परस्पर शब्द करने लगे।८।

खेलने के लिए सब बालकों ने एक स्वर से कहा कि—हे कृष्ण! आप हमारे साथी (भाग) बांट दीजिए। यकुलपति श्रीकृष्ण ने अच्छी तरह विचार करके बराबर के लोग दोनों ओर बांट दिये।९।

दोनों ओर अपार गोप बालक कंधों पर लाठियां लिये उल्लसित हो रहे थे। इतने में ही गड़े हुए मेड़िये से गेंद को मैदान के अन्दर घुमाने का प्रयत्न करते हुए घेर लिया।१०।

मुख्य खिलाड़ियों में प्रमुख खिलाड़ी श्रीकृष्ण खेल में मस्त तथा लीन होकर ग्वालों के साथ खेल रहे हैं। वे अधर मार्ग से आती हुई गेंद को एक ही चोट से उलट देते हैं एवं 'राम चोट' कहते हुए उस गेंद की चाल को पलट देते हैं।११।

---

७ पुळी=चलकर। नगर=नगर। नीसार=निकलकर। प्रहट्ट=समतल भूमि पर, गोद में। तट्ट=किनारे पर। सौंधा=इत्र, माथे में डालने का सुगंधित मसाला। सोढि=सुगंधि। माथें=मस्तक पर। मजरी=तुलसी। वेणु=बांसुरी। हाथें=हाथ में।

८ थई=बजी। बांसळी=बांसुरी की। सिंगळी=सींगी की। नादवा=ध्वनि। तो=वहां पर। गातो=शरीर पर। आमना सामना=इधर उधर वाले। प्रत्य सद्दा=परस्पर शब्द करने वाले। आहीर-पद्दा=अहीर बालक।

९ रमेवा=खेलने के लिए। हेक=एक। राग=आवाज से। विभ गै=हिस्सों में बांटना। रूडी=अच्छी। सारखा=समान। बहूं=दोनों। किनारी=किनारे, तरफ में।

१० पखेपार=अपार। कंध=कंधों पर। हुलास=उल्लसित हो रहे हैं। मैदान=खेलने का चौगान। घणा=बहुत। घेर=घेरे में।

११ ऊलट=मोड़ देते हैं। फेर=प्रहार से। फिरि=घूमकर, पुन। दौट=चलती हुई गेंद। मभी=पुरुष। थाकरो=तेज। मातो=मस्त। रम=खेल रहा है। रम रातो=लीन होकर।

मिलै चाट सामा[1] सत्री[2] दाट मार्यं,
हुई दुहै[3] मल्ला तणी ह्ल हाथ ।
चढार[4] घणू मावड तीर चाढ[6],
जमुना तग नागिया नीर जाट ॥१२॥

दडी[1] लार का्हो चऱ्यो व्रन्छ[2] डाळो
भरी मप[3] वाळो द्रहै नाग वाळो[4] ।
काळोनाग रा[5] रूा ह सभाळ वेवा
लवी जाण थून्यो दर्वा[6] मच्छ लेवा ॥१३॥

मड्यो[1] दूसेरो खेल मेळत मावे,
हिव[2] ऊनरो वात गोवाळ हावे ।
कर[3] श्रीन मडा नमतेय[4] काह्ना,
जोव धेन धड्ढीक[5] थाठै जम ना ॥१४॥

जदुनाथ फाळी सामो[1] त्राथ जोड,
घणी भोम चाळी चढा व्रान घाट ।
ऊभा गाय गावाळ[3] सूरत जार,
हाहावार हक्कार समार सार ॥१५॥

सुण्यो वात आयात माता साही,
जसोदा टळी कदळी[1] रभ जेही ।
समाहै[2] सत्री लार हाली सयाणी
रहात्री निचाळै थकी नदराणी[3] ॥१६॥

---

१२ [1] घामा [ग], सामा [ट] [2] सभी [ट च] [3] दूध [ग], दुद्ध [ड], [4] चढाव [ट], [5] दोट [ख ग], फेर [ड] [6] चाडे [ड] ।

१३ [1] दहा [ख ग] दडू [ड], [2] व्रछ [ग] [3] झाक [ख], [6] द्रहे झीव [ग] [4] भाली [ख ग ट] [5] सु [ख ट] [6] द्रहे झीव [ग] [ट] ।

१४ [1] हिम [ख] [2] फिर [ट] [3] करत्रिण [ख], [4] नम देव [ख], नमदेव [ड], [5] धाढक [ख] घेषीक [ग], धुकार [च] ।

१५ [1] सरीसो बथ [ग], [2] ऊभी [ग], [3] गोधार ।

१६ [1] कदळो [ग], [2] समाहे [ग], [3] यश राणी ।

दोनों ओर के खिलाड़ियों के सम्मिलित हाथों से गेंद को सभी ग्वालों पर आमने सामने प्रहार होने लगे तथा यमुना तट पर अत्यन्त निकट ले जाते हुए गेंद को यमुना के गहरे पानी में डाल दिया ।१२।

गेंद के पीछे श्रीकृष्ण वृक्ष की डाल पर चढ़े और जहां पर कालिय नाग का कुण्ड था उसमें छलांग लगाई । श्रीकृष्ण, कालिय नाग का घर स्मरण करके इस प्रकार कूदे मानो लुब्धक (किलकिला पक्षी) मछली प्राप्त करने के लिए समुद्र में कूदा हो । १३।

खेल जा रहे खेल के ऊपर अन्य खेल रच गया । अब ग्वालों के हाथ से बात चली गई । श्रीकृष्ण को तीनों खड नमस्कार करने लगे और यमुना के तट पर खड़ी हुई गायें स्तब्ध होकर देखने लगीं ।१४।

'यदुपति श्रीकृष्ण कालिय से बाहु युद्ध करेंगे'' यह बात थोड़े चक्कर (अत्यन्त तीव्र गति से) दूर दूर तक पहुंच गई । गायें एवं ग्वाल खड़े हुए आत्तनाद पूर्वक विलाप कर रहे थे । सारे विश्व में हाहाकार मच गया ।१५।

यह सुनकर स्नेहमयी माता यशोदाजी इस बात के आघात से कदली स्तम्भ की तरह गिर गई । समझदार सखियां ने उन्हें सम्हाला और फिर वे उनके पीछे पीछे चलने लगी किन्तु चलते चलते वे मार्ग में ही थक गई ।१६।

---

१२ चोट=प्रहार । सामी=सामने । सबी=सारी । गंग्ला=खिलाड़ियों । तणी=की । नांकड=निकट । नांखियो=डाल दिया । नीर आहै=गहरे पानी में ।

१३ लार=पीछे । वृन्द=वृक्ष । डाली=शाखा । झप=छलांग । कालो द्रहे=कालिय नाग के कुण्ड में । सभार=स्मरण करके । वेरा=घर । लधी=लुब्धक पक्षी (राजस्थान में इसे किलकिला भी कहते हैं) । मच्छ=मत्स्य । दधी=समुद्र । लवा=लेने के लिए ।

१४ खेलत=खेले जाते हुए । म थ=ऊपर । हिव=अब । त्रीन=तीन जुग=जैसी है । थकोक=स्तब्ध । काठ=किनारे पर ।

१५ सबी=सामने, से । बाथ जोड=बाहु युद्ध करेंगे । भोम=पृथ्वी । ऊभा=खड़े हुए । झूरत=विलाप कर रहे थे । प्यार=आर्त । सार=समस्त ।

१६ आघात=प्रहार । ढळी=गिर पड़ी । थंभ=स्तम्भ । सबाहै=सम्हाल करके । हाली=चली । सयाणी=चतुर । राही=राह में । विचाले=बीच में । थकी=शिथिल हो गई ।

तवै नदरी नार[1] आहीर टोळा
रहै आपड हेव हेवा[2] सगोळा[3] ।
जुव[4] जोविता जूथ भेळो जसूदा,
वपयो[5] हुई, वानह्वो मेघ नू दा ॥१७॥

विहृ[1] लोचनै नीर धारा वहती,
मनेयो[2] कनयो जसूदा नहती[3] ।
पलदी[4] तण आड़[5] लोटत[6] वाठ,
गयो जाणि[7] चिंतामणि रच गाठै ॥१८॥

बलद्देव वूझ्यो[1] दिखाळयो[2] सुदामा,
रम्यो साम ते ठाम जोवत रामा ।
लिया जीहृ दते नही लीक[3] लोपी,
गुहै[4] गाय गोपाळ झूरत्य गोपी ॥१९॥

ऊभी घूट[1] हेको करी[2] जात आरा,
थभेरी म[3] हूका लहैका मयारा ।
जसोदान के[4] झप साधी जमना,
पहे लाभियो मान हू जात पना[5] ॥२०॥

अचाणक ऊभौ दरव्वार आव,
मिळी नागणी हेक हेका मिळावै ।
इस[1] वाल गोपाल पामो अचभा,
रही दोवळी[2] नागणी देव रभा ॥२१॥

---

१७ [1] नारि [ग घ ङ] [2] हामी [ख], [3] हमोले [ख च], सलोले [ग ङ], [4] आई जोवती [ख ग], [5] बाबीयो [ग] ।

१८ [1] वहै [ख ग] [2] काहुवो या हुवो [ग], [3] करती [ख] [4] कालीद्री [ख], कुमीद्री [ग], [5] प्रावि [ख ग], [6] झूरति [ख], [7] मग [ख ग]

१९ [1] बूझ [ङ च] [2] दिखायो [ख] न्हिाले [ग घ च] [3] निज [ख ग] लज्ञा [च], [4] गयो [ख में नहीं ग] ।

२० [1] घोट [ख ग], धोट [ङ] [2] करिजास [ख च] फरैनास [ग], घर धास [ङ], [3] थभ राम ऊभो [ख च], थभे ऐम [ङ] [4] यह पद्यांश नहीं है [ख ग च], [5] पेहलो मरे मात हू तात प ना [ङ] ।

२१ [1] वाम [ख ग] [2] देवळी [ग]।

तभी नंद के पीछे अहीर समूह एक दूसरे के कंधों को पकड़ पकड़ कर चलने लगा तथा स्त्री समूह में यशोदाजी चातक के समान बनी हुई कन्हैया रूपी मेघ बूंदों को देख रही थीं ।१७।

यशोदाजी कन्हैया ! कन्हैया !! कहती हुई, दोनों आंखों से अश्रुधारा बहाती हुई, यमुना के तट पर लोट रही थीं मानो किसी दीन हीन के पास से चिंतामणि रत्न खो गया हो ।१८।

बलदेव के पूछने पर सुदामा ने जिस स्थान पर श्रीकृष्ण खेले थे वह स्थान बताया । उसे यशोदाजी देख रही थीं । पास ही गायें, ग्वाल बाल और गोपिकाएं, दांतों तले जीभ दबाये हुए विलाप कर रहे थे ।१९।

समस्त गायें, गोप एवं ग्वालिनियां मानसिक पीड़ा न सकने के कारण उच्च स्वर से आर्त्तनाद करती हुई यूथ बनाए खड़ी थीं । इधर भगवान श्रीकृष्ण ने यमुना के अन्दर छलांग लगाई । उनको पानी के अन्दर मार्ग मिल गया । वे जल में ऐसे विचरण कर रहे थे मानों सर्प पानी के अन्दर विचर रहा हो ।२०।

श्रीकृष्ण को अकस्मात् दरबार में आया देख समस्त नागिनियां परस्पर एक दूसरे से मिलीं । बालक गोपाल को देखकर विस्मय को प्राप्त हुई तथा उनके आसपास अप्सराओं की तरह एकत्र हो गई ।२१।

---

१७ तव=तभी । आहीर टोळ=अहीरों के समूह में । चल्ल=चले । झापह=पकड़े हुए । हेक हेकां=एक दूसरे के । खपोल=कंधे । जुव=देखती है । जोपित जूप=स्त्री समूह । घनी=साथ । बपयो=चातक पक्षी ।

१८ बिहूं=दोनों । लोचन=नेत्रों से । वहती=बहाती हुई । कहती=कहती हुई । कलदी=यमुना । तणे=के । कांठ=किनारे । जांणि=मानो । रंक=दीन । गांठे=पल्ले से ।

१९ बूझ्यो=पूछा । रम्यो=खेला । ते=वह । ठाम=स्थान । जोवत=देख रही थी । जीह=जीभ । लीक=लकीर । गुढ=समीप । झूरत्य=विलाप कर रहे थे ।

२० थूट=यूथ बनाया । हेको=एक । आरा=आर्त्तनाद । अभेरी म=सकती नहीं थी । दुकां=मानसिक यातनाएं, कसकें । लहैरा=धार । मधारा=अन्दर । पहे=मार्ग । लाभियो=मिला । पन्ना=सर्प ।

२१ अचाणक=अकस्मात् सहसा । दृग=देखकर । पामी=पाई । अचमा=आश्चर्य । दावळी=इर्द गिर्द, आसपास । देवरमा=अप्सरा ।

जप [1]नागपत्नी[2] रम्भी रूप जोती,
महाभद्र जाती तणा वान[3] मोती ।
पुणी[4] सामळो गात्र पीळा पिछोरा,
कणा ऊपरा नग ओप कदोरा ॥२२॥

पगा[1] घूघरी रोळ आणद पुजा,
गळ हार मोती रळ माळ गुजा ।
विच दूलडी हेम चौकी विराज,
जिसो[2] राजथी बेहरी नम्य राज ॥२३॥

बिहू[1] बथ बाजू तणा[2] नग वाहै,
मणी[3] नग हीरा तणी ज्योत माहै ।
महीनारि जप लई[4] मोल ऊंची,
पहच प्रभूर लटक प्रहूची ॥२४॥

सब सुदरी सुरगी देख मोही[1]
वळ दाडिमें दत नीकी विमोही ।
अधूरे[2] अमृत न जाये अघाई,
झिगे कुडळा लोळ[3] कपोल ळाई ॥२५॥

इस नासिका सिध्ध[1] दीपक्क ऐरी,
कळी चप जाण त्ळी[2] रूप केरी ।
नवा नेह दीरघ्घ पक्ज नेत्र
सोभा मीन खजन मृगा महेत[3] ॥२६॥

---

२२ [1] अपि [ख] ओव [घ] [2] पुत्री [क] [3] नावय [ख घ], [4] पुण [ख] पणा [ङ] ।

२३ [1] पदे [ग] पाए [ख], [2] इसो [ख]

२४ [1] बाहा [ख] बहूी [ग], [2] बाजूणा [घ] [3], मणि जोत हीरा तणी मग माहै [ख] [4] लीया [ख] मही परी रीम मुनक की [ग] ।

२५ [1]सोही [ग घ ङ], [2] अधरे [ख] [3] बान [ख] ।

२६ [1]सिध [ग], जाणि [ख] [2] जुनी [च] [3] सनेत्र [ग] सवेगे [ङ]

वे क्षत्रिय बालक श्रीकृष्ण के स्वरूप को देखती हुई कहने लगीं कि—अरे ! इनके कानों में तो महामद जाति के मोती हैं तथा श्याम गात्र पर पीताम्बर सुशोभित है एवं उसके किनारे पर नगीने और करधनी शोभायमान हो रहे हैं ।२२।

पैरों में आनन्द का समूह, घुंघरुओं का शब्द हो रहा है तथा गले में मोतियों का हार एवं गुंजाओं की माला झूल रही है । साथ ही दो लड़वाली सांकल के बीच में एक चौकी शोभा दे रहा है । जिस प्रकार का यह राजकुमार है उसके ही अनुरूप यह सिंह नख शोभित हो रहा है ।२३।

दोनों बाहों पर बाजूबंद बांधे हुए हैं जिनके अन्दर मणि, हीरे आदि नगीनों की ज्योति प्रकाशमान हो रही है । एक दूसरी नागिन बोली—अरे देखो ! भगवान के पहुंचे में जो यह पहुंची लटक रही है, यह तो बहुत ही ऊंची कीमत में बनाई गई है ।२४।

सभी सुन्दरियां मुद्रिका को देखते ही मोहित हो गईं । फिर सम्मोहित करने वाली दाड़िम के बीजों के समान दांतों की पंक्ति थी जो अधरामृत पान से तृप्त ही नहीं हो रही थी, साथ ही कपोल चंचल कुंडलों की आभा से प्रकाशमान हो रहे थे ।२५।

इनकी नासिका दीपक की लौ के समान (तीखी) दिखाई दे रही है वह मानों चम्पे की कली एवं लांप की नोक है । नवीन स्नेह के समान सवद्नशील बड़े नेत्र, कमल के समान शोभायमान हो रहे हैं । इसप्रकार मानों मीन, खंजन एवं मृगों की सभी छटा यहां एकत्र हो गई है ।२६।

---

२२ जप=कहने लगी । खत्री=क्षत्रिय । जोतो=देखती हुई, ज्योति । सांमळो=श्यामवर्ण का । गात्र=शरीर । पामा पिछोरा=पीले रंग का वस्त्र । कणी कारे=किनारे पर । नग=नगीने । ओप=सुशोभित हो रहे हैं ।

२३ रोळ=शब्द । झळ=झूल रहे हैं । बिच=मध्य में । केहरी नख=शेर का नाखून । राज=फबता है ।

२४ बिहू=दोनों । बाहे=भुजाओं में । जोती=ज्योति । मांहे=अन्दर जप=कहती है । मोल=कीमत । पहूंची=पहुंचे का आभूषण ।

२५ मुंदरी=मुद्रिका अंगूठी । मोही=मोहित हो गई । वळ=फिर । दाडिमी=दाड़िम के बीजों के समान । अधुर=अधरों के । धपाई=तृप्ति । झिग=प्रकाशमान । लोळ=चपल, चलायमान । झांई=प्रतिबिम्ब ।

२६ सिख=लौ । एरी=इनकी । चप=चम्पा । सळी=नोक । लप=लांप नामक घास । दीरघ=बड़े । पंकज=कमल । सोभा=शोभा ।

दोहू भ्रकुटी घोर हु[1] भेलि हूहै,[2]
श्रम[3] भग मृता वली[4] जाण भूहै।
अली सनुगी जाणि वीवी दलक्क,
तणों केसरी कस्सतूरी तिलक्क ॥२७॥

ययो चोळमा[1] रग रगी विरगी,
सुहै ऊपरा पाघ लागी सुचगी।
चवे[2] नागणी चद्रका मोर ची ही,[3]
ओपे चोप[4] पावन पटटा अछेहो ॥२८॥

सराहै सराहै करै[1] आवलोक,[2]
रूचो नाग जाया तणी राज लोक।
ऐसी[3] भागणी घू ण जे प्रम[4] आयो
हिटोगो घडाड[5] घर हुनरायो ॥ २९ ॥

हुई रूपमयी देव देख[1] हैरान्न[2]
जप जागमी नाग रानी जनन्न।
अन[3] दागव बाळ[4] होसी अयारी,
पगल्ले पगल्ल महल्लै पधारी ॥ ३० ॥

रहा ता घर दाव[1] दूज रहालू,
मारो घाट वराट एय न मालू।
चमरी चमकी सबै चित[2] चेती,
लुळी[3] पाय लागी वळ लू ण लेती ॥ ३१ ॥

---

२७ [1]घोर [ख,ग], ऊर [ङ], स्यामणी देस देहै [घ], [2]ढोहै [ङ] [3]भमे [ख ग], [4]सलि [ख ग घ]।

२८ [1]चोळ [ख], रगनई रग रते [घ] [2]चव [ङ] [3]मूरतोहो [ख], मोर तेही [घ ङ], [4] चाप पारप [ख], चोप पावर [ग], रुप साल पारित्र [घ]।

२९ [1] कहै [ग] कीयो [घ] पणू [ङ] [2] यावलोके [ग] प्रवमाक [ङ], [3] एही [ख], [4] प्र धज [घ] [5] ढवारे [ख घ], घवारे [घ]।

३० [1] देखी [ङ] [2] हरने [ख], हराने [ग] हिरन्ने [ङ] [3] अञ्ञो [ख], अरो, [ग], योग [ङ], [4] वाम [ख]।

३१ [1] देव [ख ग], भाव [घ च], [2] चेन [ख], [3] लागू [ग ग]।

हे सखी ! दोनों भृकुटियों के किनारों को देखकर ऐसा भ्रम होता है मानों दोनों भौंहों के ऊपर भौंरे सो रहे हों और अलकें मानों भ्रमरों की शृंखला हो । इसी प्रकार केशर तथा कस्तूरी का तिलक भी शोभायमान हो रहा है ।२७।

विविध रंगों में रंगी हुई चोळणा बांधी हुई है और मस्तक पर टेढ़ी पगड़ी भली शोभित हो रही है । इसके अतिरिक्त मयूर चंद्रिका भी लगाई हुई है । नागिन कहती है कि—इनकी प्रभा तो वर्षा ऋतु की अंतहीन घटा के समान प्रतीत हो रही है ।२८।

इधर उधर से श्रीकृष्ण को देख कर नागलोक का दरबार साधारण लोगों से खचाखच भर गया और वे लोग कहने लगे कि—ऐसी कौन भाग्यवान है जिसकी कोख से इस (बालक) ने जन्म लिया और जिसने अपने घर पर हिंडोला डालकर झुलराया ।२९।

स्वरूपवान भगवान श्रीकृष्ण को देख कर सभी आश्चर्यचकित हो गए और कहने लगे—नागराज जग जायेगा, इस बालक को यत्नपूर्वक रखो । ऐसा सुनकर नागिनें भगवान कृष्ण से कहने लगीं—वत्स ! तुम्हें देर तो होगी फिर भी आप धीरे धीरे हमारे महल में पधारो ।३०।

यह सुनकर भगवान कृष्ण ने प्रत्युत्तर दिया कि—यदि तुम्हारे घर रहूंगा तो किसी अन्य अवसर पर रहूंगा, मेरा स्वरूप विराट है अत अभी यहां नहीं समा सकता । भगवान के मुख से इस प्रकार का कथन सुनकर सभी नागिनें चौंक चौंक कर अपने मन में सावधान होती हुई भगवान के चरणों में झुककर पढ़ने लगीं और बलैया लेने लगीं ।३१।

---

२७ कोर=किनारा । भ्रम=भ्रम है । अली=भ्रमी भौंरा । भ्रू है=भौंहों में । सकली=शृंखला । कीधी=बनाई ।

२८ चोळणां=वर्तमान काल के स्थान पर पहना जाने वाला वस्त्र । रंगीविरंगी=विविध रंगोंवाली । सांगी=टेढ़ी । चंगी=भली । वर=शोभायमान । चोप=कांति । पावस=वर्षा ऋतु । अछेही=अन्तहीन ।

२९ धराई=बिना मार्ग के । कर भावलोय=देख करके । रुधो=रुद्ध हो गया, भर गया । लोकै=साधारण लोगों से । जे=जिसकी । कूख=कुक्षि । हिंडोळो=पलना । हुलरायो=दुलार किया ।

३० हैरान=चकित । जपै=कहने लगे । जतन=यत्न पूर्वक । बाळ=बालक । पधारो=चलो ।

३१ दाव=अवसर । घाट=स्वरूप । वराट=अनंत । एथी=इस स्थान पर इसमें । मावू=समा सकता हूं । चेती=सावधान हुई । लुटी=झुककर । लुंण=बलयां ।

सुण्यो रुप वेदं सु पेख्यो गवेही,[1]
वडा भागरी नागरी नारि[2] वेही ।
मात्ही मात[3] आणद दास[4] मुरक्की,
वोलाव[5] मळे[6] नाथ नासी मुरक्की ॥३२॥

पठाहूत आयो थठ काज[1] मेहा
ग्रहा भूल्यियो बापरो, साप गेहा ।
भली[2] नागणी नाथियो राह भूलो,
दयो[3] आप री लाज लोयो[4] दडूलो ॥३३॥

पटपक मुहै[1] नागणी बोल खारो,
प्रभू जागसी[2] मूक्ष पाछा पधारो ।
काळो नाग[3] सू गीजिय थाग थानीं ।
पड्यो[4] तात मोय चढ मान पार्नों ॥३४॥

नही[1] नागणी वोल तेहा[2] निकाम
वम रस्सण इस्मण विग्सथा[3] से ।
किन्ही[4] कोर चपो, रही[5] मा[6] बकाव
इसो वाळ देखी दया मू क्ष[7] आव ॥३५॥

हजारा मुखा[1] जागसी नाग हेवा,
अडीलो[2] न छाड निराधार ऐवा[3] ।
महाकाळ काळो न वा[4] वाळ माने,
पडी दोतडी[5] आज ही[6] जाघ पान ॥३६॥

---

३२ [1] सुवेई [घ], सवायो [ग] [2] नागी भूलोन मायो [ग], [3] महामोह [ख ग] महामोद [च] [4] दय मुरकी [ख ड] [5] मुलाई मे [ख ड] [6] पळी [ख ग] ।

३३ [1] काम [घ] [2] भोळी [ख घ], भूलो [ग], [3] लिय [ग] दियो [ड], [4] लाधो [घ], दीर्घ [ग] थापे [ड], राख [च] ।

३४ [1] मुन [ख ग घ], मुही [ड] [2] जागिस्य [ख घ] [3] कुळो [ग], कानो [ड], [4] धीर [ख] धरा [घ], धरो [ड], ।

३५ [1] महो [ख] [2] इहा [ग] ऐसा [ड], [3] ग्रवधासे [ख], [4] कहे [ख] कहो [ग], कहो [ड], [5] रहै [ख], [6] थाक्य काय [ख], रहै धाकि [ग घ], थाव काय [ड] [7] मोप [ड] ।

३६ [1] मुहे [ग घ] [2] अडोलो [ख], न डुलो [घ ड], [3] सेवा [ख], नेवा [घ ड], [4] न वयू [ख], [5] दो थळी [घ], बोवडी [ड], [6] इ [ख ग] ।

भगवान के जिस स्वरूप का वर्णन वेदों में सुना था वही स्वरूप आज सबने प्रत्यक्ष देखा अतः वे नाग नारियां बड़ी भाग्यशालिनी हैं। नागिनें परस्पर हंसती हुई अपार आनन्द का कथन करने लगीं। इतने में ही भगवान के बोलों ने उन पर फिर बुरकी डालदी ।३२।

एक नागिन कहने लगी कि—लाला! तुम कहां से आए हो और यहां पर तुम्हारा क्या काम है? कहीं तुम अपना घर तो नहीं भूल गए हो? यह सर्प का घर है। ऐसा सुन कर भगवान श्रीकृष्ण बोले—हे भली नागिन! मैं मार्ग भूल कर यहां नहीं आया हूं वरन् तुम्हें तुम्हारी प्रतिष्ठा रखनी है तो मेरी गेंद जो तुमने लेली है उसे लौटादो ।३३।

हे नागिन! तेरा यह कटु वचन—"मेरा स्वामी जाग जाएगा तुम वापस चले जाओ" मेरे हृदय में खटक रहा है। नागिन बोली—मैं आपसे फिर कह रही हूं—आप कालिय नाग से शीघ्र किनारा करलो अन्यथा तुम्हारा पिता इधर उधर खोजता फिरेगा और माता का (स्तनों में) स्तन्य बह जाएगा ।३४।

भगवान श्रीकृष्ण कहने लगे—नागिन! तुम्हारी रसना के अंदर क्रुद्ध सर्प के विष के समान निवास करनेवाले वचन मत निकालो। किसी अन्य नागिन ने उसका पल्ला दबाते हुए कहा—अरी! ठहर, क्यों बकवास कर रही है। ऐसा बालक देखकर मुझे दया आ रही है ।३५।

क्योंकि हमारे मुखोंवाला कालिय नाग अभी जाग उठेगा और वह ऐसे इस प्रकार के आश्रयहीन को नहीं छोड़ेगा। महाकाल-स्वरूप कालिय कोई बालक नहीं जानेगा! (बालक समझ कर नहीं छोड़ेगा।) आज यह कृष्ण स्वरूप बकरी, बाघ स्वरूप कालिय के पाले पड़ गई है ।३६।

---

३२ पेख्यो=देखा। मांहो मांह=परस्पर। दाख=कहने लगीं। मुलकी =स्मित हास्य से। बुलावे=बचनों ने। नांखी=डाली। बुरकी =वशीकरण औषधि, बुरकी।

३३ कठाहुंत=कहां से। अठे=यहां। केहा=कैसा। ग्रहा=घर। नाविया =नहीं आया। राह=मार्ग। लीधो=लिया हुआ।

३४ मुहे=मेरे को। खारो=कटु। मूझ=मेरे। पाछा=वापिस। वग =शीघ्र। कांनो=किनारा। सोझ=ढूंढता फिरेगा। थांनों=स्तन्य

३५ गेहा=इस प्रकार के। रसणे=रसना में। डसणी=डसने वाले। विखधर से=विषधर के समान। किही=किसी ने। कोर=किनारा चपी=दबाया। रहो=ठहर। मूझ=मुझे।

३६ हेवा=अभी। अठीलो=ऐसे। निराधार=आश्रयहीन। ईंधा=ऐसा, इस प्रकार का। मान=समझेगा। गोडड़ी=बकरी। पांन=पाले।

जायो[1] नागणो नाग वेगो जगाडो,[2]
अठ माडसा आज वडू[3] अखाडो।
रढीजे इसा[4] मात आगे रढाळा,
चवीज नही बोल, ए काळ चाळा[5] ॥३७॥
न दीठो रुदोये न[1] नेत्र निहाळी,
कान ही नणी[2] सांभळयो नाग-चाळी।
दरब्बार काळी तणो मेल्हि जावो,
लड जम राणा[3] न को लाभ लावो ॥३८॥
चाळा मा कर[1] सामुहा जुद्ध चाळा,
बजारधा[2] न थारे अज चाळ वाळा।
नेलीज रमोजे पिता[3]-मातु खोळा,
भरीज नही आभ सू वाय भोळा ॥३९॥
गुडैवा[1] जु तू[2] नाग काळी जगाव,
अज मुरस पन्नान री[3] मोडि[4] आव।
जुन वस थारी परस्स मनहो,[5]
काळी नाग सू जुद्ध[6] रो लाग केहो ॥४०॥
चछरा[1] वाल देवे विसू[2] काळ छेडे
वटमका अटवरा[3] नही तूझ केडे।
दुरगा दुवाहा दुहल्ला[4] दुझरला,
भडा रा नही अव्वला झूल[5] भरला[6] ॥४१॥

---

३७ [1] जा है [ख] [2] जगावो [ख] [3] वडे [ग घ] दोडू [ङ], [4] इसू मात [ग घ] मसोमात [ङ] [5] चविडोली थितव्य मकान वाला [ख], चव बारा एह यया काळ चाळा [ग] चवई बोल ऐ०ई चवई चकचाळा [घ]।

३८ [1] रुदुयेण्य [ख घ], अन्यिारा [ग], रुदैइन [ङ] जदीफेरा [घ] [2] ढी [ख], काही नहीं [ङ], [3] न थयो [ख] निवयो [ग], विचे [ङ]।

३९ [1] करतो [ख], समो [ग घ], [2] वधे रोम थारे [ग], वधेरान थारे [ङ], [3] यह पक्तन नहीं है [ख ग], घणू [ङ]।

४० [1] जडेवा [ख], [2] न तु [ग], [3] रा [ग], नहीं है [ङ], [4] मोड [ख], [5] जुन थम थारी परास स जेहो [ख घ च], [6] समाम [ङ]।

४१ [1] छावा [ख], छरा [ग] चवा [ङ], छवि [घ], [2] कसू [ङ], [3] भटका [ग], हटवणा [घ], [4] तू हासी [ख], तू हाटव [घ], मोध[5] [ख], फुत [ङ], [6] माला [ङ]।

ऐसा सुनकर भगवान श्रीकृष्ण कहने लगे—हे नागिन ! तुम शीघ्र जाकर कालिय को जगा दो हम दोनों यहां पर अखाड़ा रचेंगे । नागिन बोली—लाल ! इस प्रकार का रोना मा के सामने रोना (इस प्रकार मा के सामने मचलना) यहां ये काल को प्रेरित करने वाले वचन मत कहो ।३७।

तुमने कभी कालिय नाग को आखों से निहार कर नहीं देखा है और न कानों से सुना है । कालिय के दरबार को यमराज भी बायां रख कर चलते हैं और तुम भी कोई लाभ नहीं उठाओगे ।३८।

तुम युद्ध को प्रेरित करने वाली चालें मत चलो (अपनी शक्ति और कद से बढ़ करके स्वांग मत करो) । अभी तक तुम्हारे बचपन के केशों का मुण्डन भी नहीं हुआ है । तुम अपने माता पिता की गोद में खेलना, कूदना । भोले ! आकाश को बाहुपाश में नहीं भरा जा सकता ।३९।

तुम कालिय नाग को युद्ध के निमित्त जगाते हो ! अभी तक तो तुम्हारे मुंह से दुग्ध-पान की गंध आ रही है । हृदय से लगाकर स्पर्श करने जैसी तुम्हारी अवस्था देखते हुए कालिय नाग से युद्ध का लगाव कैसा ।४०।

मैं बालक देखकर कहता हूं कि—क्यों मौत को बुला रहा है । तेरे पास सेना आदि भी कुछ नहीं है और दुरतमय, दुसह, दुलभ, दुद्ध प एवं श्रेष्ठ योद्धाओं का अच्छा समूह भी नहीं है ।४१।

---

३७ नेगी=शीघ्र । मठ=यहां । अखाड़ो=दंगल । रवीबं=रोना (क्रि०) रवाळा=रोना । कहीज नहीं=नहीं कहना । काळ चाळा=काल के उपद्रव, काल को प्रेरित करने वाले ।

३८ दीठो=देखा । निहाळी=निहार कर । नथी=नहीं । सांभळ्यो=सुना । डावो=बायां । चढ=चलते हैं ।

३९ चाळा=चाल, शरारत । मा=नहीं । मामुडा=संपुल । जुद्ध-चाळा=युद्ध के उपद्रव, युद्ध को प्रेरणा देने वाले । उतारया=काटे । हजै=अभी तक । बाळ=केश । खोळा=गोद में । आभ=आकाश । बाथ=बाहुपाश ।

४० जुदेवा=युद्ध करने को । पयपानरी=दुग्धपान की । सोढि=गंध । जुन=देखकर । परसं=प्यार करें । लाग=लगाव, कर ।

४१ कहवा=कहता हूं । किमु=क्यों । कटकरी घटकर्ण=अथवा सेना मध्य । कड़=पास । भड़ांरा=वीरों के । मकबना=श्रेष्ठ । झूम=समूह ।

न को[1] हैदळे पदळे मेघ नद्दा,
जुड वा न को उम्मरा[2] नाम जद्दा ।
सचाळा मुजाळा लवाळा न साथी,
हठाळा पटाळा दताळा न हाथी ॥४२॥

घोड़ा न भटा रा नही धागरट्टा,
नही घूघरै पाखरै रोळ थट्टा ।
माहै वाह[1] बाजू हजारा न मखी,[2]
नहो[3] अगि अग, नहो जोबरक्खी ॥४३॥

ठवै हाथळा राग[1] रागै न ठाई,
प्रहूच[2] प्रहूची लोह मौजा न पाई ।
जडी छवकडी[3] टोप नाही जरद्दा
गुपत्तो न छत्ती न कत्ती न गद्दा ॥४४॥

फिरै हवरी सैन्य[1] नाही फरस्सी,
कहूं चौळ[2] कट्टार कस्सी न[3] कस्सी ।
टकारी न भारी न अढार टाकी,
पपाण[4] न वाण न कमाण बाकी ॥४५॥

नफेरी न भेरी न निस्साण-नद्दा,
रिणतूर बाज न गाज रवद्दा ।
न को बाजद पाय[1] पामाळ[2] वज्जई,[3]
छिण ऊफण रेण रणा न छज्जई[4] ॥४६॥

---

४२ [1] नहीं [ड], [2] रण्ण वद्दाह जद्दा [ड] ।

४३ [1] बाहू बाहू [ष], [2] महक्वी [ड], [3] नहीं चोण मंगासता औव रक्षी [ख ष], जूबै [ड] अंग मगे [घ] ।

४४ [1] हाप रगीन ठाई [ख ग], [2] प्रहूंच प्रभूरं [ष ष], [3] जदी छेकड़ी [ख ग] ।

४५ [1] सेल [ख ग] [2] कचोली [ड], [3] स [ड], [4] बघाएा [ख ग ड],

४६ [1] बाजनो पाय [ख], बाजनो पाय [ङ], [2] पइमाळ [ख प], पेयाल [ड], [3] वाई [ड], [4] छाई [ख ड] ।

नहीं कोई हयदल एवं पैदलों का मेघ गर्जन हो रहा है। लड़ने के लिए चुने हुए प्रसिद्ध उमराव भी नहीं हैं। चंचल भुजाओंवाले सिंह के समान साथी भी नहीं हैं और हठील घोड़े एवं बड़े बड़े दांतों वाले हाथी भी नहीं हैं।४२।

घोड़ों का और सुभटों का समूह भी नहीं है और पाखरों में लगे हुए घुंघरुओं की झनकार भी नहीं सुनाई दे रही है। बाहुओं के अंदर हजार कोलों वाला बाजूबंद तथा शरीर पर बख्तर एवं ओवरलो भी नहीं है।४३।

वीरों के हाथों में तथा रानों में यथास्थान रांग के कवच भी नहीं दीख रहे हैं और पहुंचों पर पहुंचिया तथा परों पर लोहे के मोजे भी नहीं हैं इसी प्रकार छल्लियों द्वारा जटित शिरस्त्राण युक्त कवच भी नहीं है। तुम्हारे पास मुसि, शक्ति, कर्त्तरी एवं गदर नामक शस्त्र भी नहीं दिखाई देते हैं।४४।

विस्तृत सेना में फरसिया भी नहीं फिर रही हैं और कटिवस्त्र से कटारी भी कसकर बांधी हुई नहीं है। भीषण टंकार करने वाले धनुष भी नहीं दिखाई देते हैं। और तो और मामूली बांकी कमाए एवं बाण तक भी पास में नहीं हैं।४५।

नफीरी, भेरी, नगारे एवं रणतूर भी नहीं बज रहे हैं और उनसे होने वाला नाद भी नहीं हो रहा है। घोड़ों के पद प्रहार से पाताल भी नहीं बज रहा है (या घोड़ों के पांवों में डाली हुई पायलें भी नहीं बज रही हैं) तथा गगन पद रज से सूर्य भी ढका हुआ नहीं दिखाई दे रहा है।४६।

---

४२ जुड़ेवा= युद्ध करने के लिये। उम्मरा=उमराव। नामजद्दा=चुने हुए। चपाळा=चपळ। तकाळा=सिंह। पटाळा=घोड़े।

४३ धायरट्टा=समूह। पाखर=बख्तरों की। रोळ=झनकार। थट्टा=समूह।

४४ ठव=यथास्थान। ठाई=जचाकर, युक्तिपूर्वक। पाई=परों में। जरद्दा=कवच। छलो=छल्ला।

४५ कबर=समूह, विस्तार। कड़े चोळ=कटिवस्त्र में। घड़ार टकी=धनुष। पसाएण=पास में तूणीर (?) बांकी=अदभुत टेढ़ी

४६ भेरी=भेर। निसांण=नगारे। रणतूर=युद्ध के बाजे। घोर=शब्द का, बहुत। वाजै=घोड़ों के। रेण=धूलि। रैणा=सूर्य, आकाश।

न का नकीऐ साप सापा न राजै,[1]
वढै रागरो[2] घुंन फौज न वाज ।
गुड नाळ[3] गोळा न दारु न गाज,
वहे होक होसा[4] न का साक वाज ॥४७॥

न को[1] हुल्लव जन छूट हवाई,
त्रिवाळ वडाळ न वाजै त्रिघाई ।
थडै वहड[2] हूह माती न थट्टा
घुर जाण[3] आसाढ री मेघ[4] घट्टा ॥४८॥

ढळक्कतडी[1] ढाल नेजा न धज्जा,
दिसै मोरळी हव थारै दुभुज्जा ।
आया औद्रक[2] सूरमा ऐणि[3] आर,
यतै लोहवो[4] लोह रिछया न थार ॥४९॥

नही सैन सैनाधि एवो सजाई
लड सो किस मूळ[1] पूछा, लडाई ।
भण[2] नागपत्नी[3] जिता मूझ भीर,
तिता माहो[4] ऐवो नही तूझ[5] तीरै ॥५०॥

कटक्का खगा वाहरो नाग[1] काठै,
अमा नागणी-पत्य[2] री जूझ आछै ।
वुलाडो जगाडो जुवो जुध्ध बाथ ।
हारिया जीपिया [3] करतार हाथै ॥५१॥

इसो आज ते[1] कोण भूलोक आछै,
काळीनाग सू जुध्ध[2] संग्राम काछै ।
चढ[3] तूण काळी तणी सीम चांप,
काळीनाग हूं आज ही वंस काप ॥५२॥

---

४७ [1] न कू नासिये साप सापा न राज । [ख ग ङ], [2] वहारागरो [ख ग ङ], [3] गडोनाल्य [ख], गुडे [ग], गडे [ङ], [4] कोका [ख,ग] । [■], घुडा वेहूं वेहूं [घ च],

४८ [1] वगो हुं [ख], [2] वहू वेह वेहूह [■], घुडा वेहूं वेहूं [घ च],
[3] जेम [ख ग] [4] मेह [ग ङ] ।

४९ [1] ढलकतडे [ख], री [ग] नको [ङ], [2] धावे उमगे [ङ], [3] ऐह
[ङ], [4] लहडु [ख घ] ।

५० [1] सूत्र [ख], सूत [ग], मोति [च], पूत्र [ङ], [2] सुणे [ग], [3] पुत्री
[ख ग], [4] मांहोलो एको [ख], [5] नाग [ङ] ।

५१ [1] नाम [च] [2] भूभरो पति थाछू [ग], [3] वात [ख ग ङ] ।

५२ [1] जे [ङ], [2] जोध [ङ], [3] चढ विषवाला [ख ग] ।

सेना मे शाखा प्रशाखा के नकीब भी नहीं शोभित हो रहे हैं और मारू राग को धुन भी नहीं बज रही है। तोपों के गोलों से तथा बारूद के छूटने से गर्जना भी नहीं हो रही है। युद्ध के शब्द से होने वाला कोलाहल भी नहीं सुनाई दे रहा है।४७।

'हुबक' ऐसी आवाज करते हुए आग्नेयास्त्र भी नहीं छूट रहे हैं। बड़े नगारों का लयपूर्ण घोष भी नहीं हो रहा है। दोनों सैन्य समूह में आषाढ़ की मेघ घटा के समान रव (हुंकार) भी नहीं हो रहा है।४८।

लटकती हुई ढालें एवं भालों की नोक पर फहराती हुई ध्वजाएं भी नहीं दिखाई देती हैं। हम तो तुम्हारे हाथ में केवलमात्र एक मुरली दिखाई देती है। इस कालिय के द्वार पर आते हुए अनेक शूरवीर भी भय खाते हैं। परन्तु तुम्हारे शरीर पर तो लोहे का कवच तक भी तो नहीं है।४९।

तुम्हारे पास न तो सेना है और न एक भी सेनापति है। मैं पूछती हूं तुम किस आधार पर युद्ध करोगे? भगवान कृष्ण इस प्रकार के वचन सुनकर बोले—नागिन! तुमने मेरे लिए जितने सहायक गिनाए हैं उनमें से तुम्हारे पास तो एक भी नहीं है!।५०।

नागिन! सैन्य एवं वीरों से रहित नाग लड़ेगा उसका और हमारा युद्ध होगा। तुम नाग को जगा करके बुलाओ और फिर हमारा बाहु युद्ध देखो। हार-जीत की बात तो ईश्वर के हाथ है।५१।

नागिन बोली—ऐसा आज पृथ्वी पर कौन है जो कालिय नाग से युद्ध लड़े और उस पर चढ़ाई करके उसकी हद बतावे? कालिय नाग से आज कस तक कांपता है।५२।

---

४७ नकीए=नकीब (चारण के मुख्य गायक)। सांप=शाखा। मरी राग=मारूराग। गुडनाळ=तोप, बंदूक। बारू=बारूद। गाज=गर्जता है। होल हौका=युद्धरव।

४८ निवाळां=नगारों के। बडाळ=बड़ों के। निधाई=लयपूर्ण ध्वनि। दळ=समूह में। हुंह=हुंकार। माचो न=मची नहीं।

४९ नेजा=भाले। धज्जा=ध्वजाएं। दुभुज्जा=दोनों हाथों में। धोद्रव=भयभीत होते हैं। ऐणि=इनके। थार=तुम्हारे।

५० सेनाधि=सेनापति। मूळ=आधार। लडाई=युद्ध। भणे=कहे। मूम=मेरे। मीरू=सहायक। तितामांझी=उनमें से। तीरे=पास।

५१ कटकां=सेना। खगों=वीरों, तलवारों। डाघ=लड़ेगा, बाधेगा। थाघ=होगा। जुवो=देखो। करतार=ईश्वर।

५२ असो=ऐसा। तै=वह। कुण=कौन। सीम=हद (सीमा)। चांप=दबाव। हूं=से। कांप=कांपता है।

जाळ थ्रिग्ल नीला वहै विस्त्र झाळा,
वदनं सहस्सं वधं व्याम व्याळा[1] ।
वडा भृग सीतग हमग वाळा,
जिरो फूंक आग [3] भर हूक फाळा ।।५३।।
अरठो घणी साम नूठी[1] अमागे ।
हुसी ठाफरा आकम्भ आज[2] नारो[3] ।
निज नारि वम्खाणिया धन्द्र[4] गाह ।
वद[5] जस्म वरो जिण हृत्य वाह[6] ।।५४।।
पनगा नरा दाणवा देवि[1] पासा ।
तुन देसावू[2] आज चगा तमामा[3] ।
फणी[4] नाथ न झाल्बू ऐणपाणी[5] ।
मोरी[6] एह[7] कक्काल्यिी द्रोहमाणी ।।५५।।
मुह[1] जोड होमो घडी हा माहे ।
निद्रो[2] नाग ते वोल घोटा त्रिवाहे ।
जमना जप्पई नागणी छोडि जारा ।
फणी फेण[3] न खावसी दसि फोरा ।।५६।।
जमना तणे[1] नागणी वण[2] जागी,
लियो[3] बाल[4] त खाजरा[5] लण लागी ।
कठ धाम मूसाळ घोटो[6] त्रिणी री,
यळ दूसरो ताहर बूण वोरा ।।५७।।

---

५३ [1] विध वाला [ग] [2] सेनग [ग], [3] बस [ग], ।

५४ [1] गुठी [ख], रूठी [ड] रूठऊ [घ], [2] कूमक मारी [ग ड], [3] इसके आगे ख प्रति में अधिक पाठ है —

वहे सीह मोनीग हबार रवीज, करसार न भावती बात कीजे ।
वधा मनपा कमला जीव वालो ममज सीयी रज तज्जा समाली ।
धुर कान कठी हाग माहो हूक, चिहू खाण वालो परि धाव चूके ।
वहा बोलिये बोन तेता विचारी, मराहे मग मद गध उतारो ।।
[4] कद [ख ग], कप [ड], नुहे [घ], [5] वढे [ड], [6] दप्प [ड], पहा [च] ।

५५ [1] वेग [ग], ऐखि [घ] [2] तुना दाखवा [ड], [3] इमे एकाणी पाठ फेरा हजारी, नही नागलो लाग मारोलगारा । म पा [ड] [4] पू खि प्रणि [ख ग] [5] जाण्यो [ग], [6] मु खे [ग], [7] ऐण [ग], एफ [ड]

५६ [1] मुर [ड], [2]नटयो [ख],नद्द [ग] निज [ड],[3] फुणा फीण [ड] ।

५७ [1] जप [ड], [2] वेण [ड], [3] लिये [ग], [4] बोलतो [ख ड], [5] सोमना [घ], [6] ढोटो [ड] ।

जब कालिय नाग के सहस्र मुखों से विष ज्वालाएं निकलकर व्योम में सर्पाकार होकर बढ़ती हैं तब हरे वृक्षों को जला देती हैं तथा जो हिमालय की बड़ी बड़ी शीतल चोटियां हैं वे तो उसकी फूत्कार के सामने छलांगें भरने लगती हैं ।५३।

मेरा पति कालिय क्रोधित हो जाने पर पागल हो जाता है ठाकुर ! आज बहुत ही घोर लड़ाई होगी । भगवान ने कहा—नागिन ! अपनी नारी के बखान करने पर पति की इज्जत नहीं बढ़ा करती, प्रत्युत जिसके बाहु प्रहारों का बखान शत्रुगण करें तब ही उसकी सच्चे माने में इज्जत बढ़ती है ।५४।

पन्नगों, मनुष्यों, राक्षसों और देवताओं के समक्ष आज तुम्हें शीघ्र ही खेल दिखाऊंगा और इन्हीं हाथों से कालिय को वश में करके पकड़ूंगा। यह कालिय मेरा परम शत्रु है ।५५।

नागिन बोली—अभी यहीं भर के अंदर आमना सामना हो जाएगा। तुमने नाग की निंदा की है इन वचनों को नागपुत्र निभाएंगे । जमुना कहने लगी—नागिन ! तुम जोर छोड़ दो । इसको छोटा समझ कर कालिय नाग नहीं खायेगा ।५६।

यमुना के वचन सुनकर नागिन सजग हुई और वचन के द्वारा ही श्रीकृष्ण की परीक्षा लेने लगी । नागिन बोली—तुम्हारा निवास एवं ननिहाल कहां पर है ? तुम किसके पुत्र हो और तुम्हारा दूसरा भाई कौन है ? ।५७।

---

५३ विहस्स=सहस्र । विरूप=विष । झाळा=लपटें । व्याळा=सर्प । शृंग=चोटी । सातन=शीतल । हेमग=बर्फ वाले पहाड़ । डूंगर=पहाड़ पहाड़ की चोटियां । फाळा=छलांग ।

५४ प्रकोपै=रुष्ट होने पर । साम=पति । गेलो=पागल । हमारी=हमारा । आकरू=तेज । मारो=युद्ध आतताय्युक्त कोलाहल । बखाणियां=प्रशंसा करने पर । कद्र=इज्जत । कद=कहें । हत्थवाह=प्रहारों की ।

५५ पासा=समीप, से । वेगा=शीघ्र । समाखा=समक्ष । फणीं=नाग । साय ल=काबू करके । ऐण पांणी=इन्हीं हाथों से । द्रोहमांणो=शत्रु ।

५६ मुहजोड़=आमना-सामना । जम्पई=कहने लगी । जोरा=जोर ।

५७ वण=वचनों से । जागी=सचेत होकर । सोजना=जांच, परीक्षा । कठ=कहां । वास=निवास । मोसाळ=ननिहाल । धारो=पुत्र । कूण=कौन । बीरो=भाई ।

अमारा[1] भगता तणा[2] एह ओरा,
मडाया[3] मथुरा धरा धाम मोरा ।
मोरैं नद बाबो जसोमत्ति[4] माई,
भलो[5] हेक बळभद्र पै[6] नाम भाई ॥५८॥

मोर वस मामो रहै[1] मूंच मूळे,
कियो वास[2] नेडो जमूना ज कूळे[3] ।
मनांसू न मूवई घडो हेक मामो ।
करै[4] सूर ऊगां[5] तणो[6] निरय सांमो ॥५६॥

सांमै मोवळो भोजना[1] करण मासी ।
इता दीह चो[2] हू हुतो उप्पवासो[3] ।
घणा दीहरो मूं कियो नेम घातै ।
हव जीम मूं जुज्झ विभ्रात जात ॥६०॥

थवै[1] मात, भ्राता विन्है[2] धन वारो,
वहै आज ते नागणी मूंझ[3] वारो,
सुरभी तणी नागणी कच सेवा,
गळे अम्ब ओया[4] सुरी नेह सेवा[5] ॥६१॥

नरा[1] मेह लाग[2] रहै देह नीको,
तिसो[3] नागणी गम्बुराचन[4] टीको ।
वधा देस दीजै विप्र[5] वेद बोल,
नही नागणी तोह[6] गौदान तोलै ॥६२॥

---

५८ [1] अमा [ग], [2] रिद वास [ड] [3] मडाघामद्वे र थवरा वास मोरा [ख] मडया धाम धरे धरा [ट] मद्दे रिद्दि वा विधि वा [च], [4] जसोदासु [ङ], [5] वळ [ख], [6] छ।

५६ [1] रहू [ग] रहे [ड घ], [2] नास [ख ग] [3] मकोल [ग] मकूलै [ङ], [4] मञ [ट], [5] ऊग [ख ग] [6] ममेजुध्द [ङ] ।

६० [1] भारवा [ङ] सोभला [च], [2] रो [ङ] [3] अप्पवासो [ख ङ] ।

६१ [1] थवि [ख], [2] वन [ङ] [3] आज तो म० पा० [च], [4] पाघ धागै [ग] मग उधां [च], [5] सवा [ग घ], ख प्रति में यह पद्यांश नहीं है।

६२ [1] नवयो [ग], नवो [ङ], [2] लागी रहो [ङ] [3] त्रिमउ [ग घ] ससू [ङ] [4] गऊराचन [ग], गवाद धाम्द्र [घ] गायरो चन्द्र [ङ] [5] विप्रांगान [ग] गो वेद [घ], द्विजावेद [ङ], [6] कोय [ग], गायरद [घ], तेह [घ], ख प्रति में यह पद्य नहीं है ।

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा कि—मेरे भक्तों के हृदयों मे एव पृथ्वी पर मथुरा मे मेरा निवास है। मेरे बाबा नदजी और माता यशोदाजी हैं और मुझ से बड़ा बलभद्र नाम का एक भाई भी है।५८।

मेरे कस नामक मामा हैं जो मेरे समीप ही यमुना तट पर निवास करते हैं। वे मुझे एक घड़ी भी मन से नहीं उतारते हैं, नित्य सूर्योदय होते ही सामना करने के लिए तयार रहते हैं।५९।

मामा ने मुझे खोजने के लिए मौसी को भी भेजा था। मैं इतने दिन से उपवास ही कर रहा हू। बहुत दिनों का नियम डाल रखा है, अब युद्ध की भ्रांति मिट जाने पर ही भोजन करूगा।६०।

हे नागिन! माता ने कहा है कि—तुम दोनों भाई गायें चराओ। आज मेरी बारी (गायें चराने की) बारी है। गायों की सेवा बहुत श्रेष्ठ है। इनकी पद रज से पाप समूह नष्ट हो जाते हैं।६१।

जिस प्रकार गो पद रज से मनुष्यों का शरीर अच्छा रहता है, उसी प्रकार गोरोचन का तिलक करने पर भी शोभित होता है। वेदों और ब्राह्मणों का कहना है कि—समस्त देश का दान देने पर भी गो दान के तुल्य नहीं हो सकता।६२।

---

५८ म्हारा=हमारे। मोरा=हृदय (उर), कोठा। मोरा=मेरा। भाई=भी। भलो=अच्छा। नाम=नाम वाला।

५९ मु झ=मेरे। मूठे=समीप। नड़ो=निकट। कूल=तट पर। सामी=युद्ध, भगवानो।

६० मोकळी=भेजी। खोजना=जाव। मासी=मौसी। दीहणो=दिनों का। उपवासी=भूखा। घणा=बहुत। नेम=नियम, व्रत। घाते=डालकर। हव=अब। जुझ=युद्ध। विभाति=विवरना। जाने=बीतने पर।

६१ कथ=कहती है। बिन्हु=दोनों। चारो=चराओ। से=यह। मु झ=मेरी। वारो=बारी। सुरभी=गाय। ऊच=श्रेष्ठ। गळे=नष्ट होते हैं। पख=पाप। थोया=समूह। खुरो रेहु=खुरों की धूलि। थेना=गायों की।

६२ नीको=अच्छा, सुन्दर। तिम्हो=उसी प्रकार। टीका=तिलक। सधा=समस्त। कोन=क त है। तोइ=तब भी। तोलै=तुल्य।

पचाअमृते देव इच्छै[1] पखाळा ।
सर्व तीथ वासो वस[2] गयसाला[3] ।
दही दूध गवा[4] ची आ सुखदाई ।
मठा माळीया[5] खाड खोहा मळाई[6] ॥६३॥

वळे हाथ मू मात आर्फ विरोळै ।
घृत पीजियै आण निवात[1] घोळै ।
लियो मागि लूणी दियो मात लूदो ।
न खमैं तिमैं नागणी बोल चूदो ॥६४॥

घणै[1] उच्छवै व्याहिया ग्रेह ग्रेवा,
पियस दुवावहि माहे परेवा ।
अवनी तणो भारि ले वध आयो,
जुवो[2] नागणी ते हुतो गच्वुजायो[3] ॥६५॥

कही सू खडो कपडो तीर[1] थाही,
महम्मा घणी प्रागणै[2] धेन माही ।
खळा हळो नागळा पाण[3] खेतो,
अमैं नागणी हाथ मे[4] आथ ऐती ॥६६॥

पड लातगी धेन ओ[1] मोर पीथै,
काळीनागनू जगवू[2] तेण[3] कीधै ।
प्रिया, तात नै गोत्र थारी पिछाण्या,
वडा गोप री पुत्र[4] आयो विहाण्या ॥६७॥

---

६३ [1] कीज पखाळा [ग], भाळा वसाळै [ग],[2] रहै [ग],[3] धेनु [ड], घ प्रति में यह पद्यांश नही है । सवामग दे दूध खगे सबारो, एरी नागणी तोल मोटो ममारो म० पा० [ड],[4] जे नवनिध [ग], पी धासमा [ड] नवनीत जे [घ],[5] मीठा घोलवो [ग] घोलिउ [ड], [6]मिलाही [ड], मिठाई [घ], यह पद्य ए प्रति में नही है ।

६४ [1] नौनीत [ड], निघाण [घ], यह पद्य ख प्रति में नहीं है ।

६५ [1] घरा उछक मांहु प्रासी गरवो, पखाळा थव धेन माहे परवो [ग], घरह मुछवइ व्याहनइ खेह ग्रोबा पचू साथव माहे परेवा [घ], घरा उछवा यह ग्रेही गरवो, पखाळावते धेन माही परवी [ड] [2] जोते [ड][3] धेन । यह पद्यांश घ प्रति में नहीं है ।

६६ [1] कोर [ड] चीर [घ],[2] पाहुणो [ग],पाहुण [घ], प्रामणे [ड], [3]कीजेन [ग ड],[4] माथमी रात [ग घ],ख प्रति में यह पद्यांश नहीं है ।

६७ [1] इणे [ग], मह [घ], मे [ड],[2] न जाणवा [ग], जगाडो मे [ड], जगाडो जे [घ ख],[3] केण [ड],[4] पूत [ग] ।

दही, दूध, घृत, शहद एवं चीनी (पंचामृत) के द्वारा प्रक्षालन की देवता भी इच्छा रखते हैं। समस्त तीर्थों का निवास गोशाला में होता है। दही, दूध एवं मट्ठा मिलाई हुई राब, चीनी मिलाया हुआ खोवा तथा मलाई, मिश्री मिलाया हुआ घृत पीने में यों ही सुख देने वाले हैं फिर जब माता उन्हें अपने हाथ से मथकर देती है तो उसमें स्वाद और भी बढ़ जाता है। मां से मक्खन मांगने पर वह उसका बड़ा सा लौंदा दे देती है। हे नागिन ! इस प्रकार का खान पान वाला मनुष्य वचन रूपी बूंदें (छींटाकशी) सहन नहीं कर सकता।६३-६४।

घर के अन्दर गाय के प्रसूत होने पर बड़ा ही उत्सव मनाया जाता है तथा उसका पीयूष मिट्टी के बर्तन (पारी) में दुहा जाता है। हे नागिन ! जो पृथ्वी का भार अपने कंधों पर धारण कर के आया वह गाय की संतान ही था।६५।

हे नागिन ! किसी भी किनारे (छोर) पर चलकर देख लो। जिसके प्रांगण में गाय है उसका बहुत महत्व है और खलिहान में तथा हल चलाने में बैलों के आधार (शक्ति)से ही खेती का कार्य होता है। इस प्रकार का गो-बल रूपी धन हमारे हाथ में है।६६।

इस द्रह का पानी पीने से गायें दुर्बल होती जा रही हैं। इसी कारण से कालिय नाग को जगाना है। नागिन ने कहा—प्रिय ! तुम्हारे पिता एवं गोत्र को हमने पहचान लिया है, सुबह सुबह बहुत बड़े गोप के पुत्र यहां आए हो ! जिस प्रकार मेरे सामने कालिय नाग को जगाने की

---

६३ इच्छ=इच्छा करते हैं। पखाळा=प्रक्षालन। बसै=रहते हैं। गऊसाळा=गोशाला में। राब=द्राक्ष में मावा डाल कर बनाया हुआ पदार्थ।

६४ घृळ=घृत। भाफ=स्वय। बिरोळ=मथकर। आण=मानो। मिश्रत=मिश्री। लू णी=मक्खन। लू बो=लौंदा। न खम=नहीं सहन कर सकते हैं। मिके=व। बोल बू न्दे=छींटाकशी।

६५ उच्छव=उत्सव। ग्रेह=घर में। ग्रेवा=गाय के। पियूख=खीस, पियूष। परेवा=पारा में। धरत्ता=पृथ्वी। भार=बोझ। कंध=कंधोंपर। गऊआयो=गो प्रसूत।

६६ चका=चला। परखो=परखो। तोर=छोर (किनारा) काही=कोई भी। महम्मा=बड़ाई। आंगण=आंगन के। मांहि=अंदर। खळां=खलिहानोंमें। हळां=हल में। पाए=आधार पर। नांगळां=बैलों के। अम=हमारे, मरे। हाथमें=वशवर्ती। माय=धन सम्पत्ति। पूनी=इतनी।

६७ तातरी=दुबल। यो=यह। पीध=पीने से (पर)। जागवू=जगाना। पिछाण्या=पहचाने। मिहाणां=प्रात।

जपै मो दिसी जेम[1] माळी जगाडो[2],
इमा[3] छाड, ले मात सू वात[4] आडो ।
हेकाम्ह मिल्ह वापसू पूछि होड,
सुतो साप जगाडीज[5] केण कोड ॥६८॥
कहै नाप चे[1] सापरी आळ वीज,
तरै[2] आविजो जागसी जाम त्रीज ।
पछा पीव[3] रा नागणी तू पिछाण[4],
वडै ठाकुरे वात वाच विहाणै ॥६९॥
रीतो[1] बाहडू जे अजोरयो धरान,
निसाणी मणा फेण पाख न मानै ।
पिता मात रो ओधणो[2] पक्वानो
मोत्या री हुई घूघरी साच[3] मानो ॥७०॥
दूज नद र घेन नौलख्ख दूणी,
लला तू नही एह खूदत लूणी ।
जिहा[1] बोल्ता ऊपड बोल जेता,
लला लहै[2] लेसो फणा फेण[3] लेता ॥७१॥
अही[1] नारि[2] तू एह नेठाह आणै,
जिव वोलिया[3] बोरु गैदत जाण ।
यृपा वण जाणे रग[4] मुझ वाळा,
पुणू[5] एकणी, वार इक्कीस पाळा ॥७२॥

---

६८ [1] मेम [ग], [2] कीली जगावो [ग], [3] मसो [ङ] [4] मात [ख] भ्रात [ङ] [5] जगाडिय [ङ]

६९ [1] तो [ग] जो [ङ] [2] तुमे [ग], तवां [ङ], [3] पछा पावरा [घ च], वापरा [ङ] [4] पमाणो [ख] ।

७० [1] रीतु बाहडु कोय जीतु नरानि [ख] रीतो बाहडु तो जीतो कुणरान [ग घ], जातु बाहिरो को भजे तू म आण [ङ], रीतो जाऊ तो कोइ जीतो घरान [च], [2] रे उधण्यै [ग], वगटु [ख], पोसियत [घ], उलट्यो [ङ] [3] साच [ग ङ घ] ।

७१ [1] जेहा [ङ], बोलिज [ग ङ] [2] लहेस [ग], लेश [ङ], [3] फुणा मीण [ग ङ] ।

७२ [1] मसो [ङ], [2] नागणि [ङ] [3] नोकल्या [ग], नीसरपा [ङ], [4] मरे [ङ], [5] पणो [ङ] ।

बात कह रहे हो इसको छोड़कर माता से बातों में ही हठ कर लेना। यदि तुम्हारी मा हां भर ले तो फिर पिता से गत बद कर पूछ लेना कि—सोते हुए सांप को किस उत्साह के लिए जगाया जाय ? ।६७-६८।

यदि तुम्हारा पिता कह दे कि—तुम जाकर भले ही सांप से छेड़खानी करो, तो तुम तभी आजाना। सांप तीसरे पहर में जगेगा। भगवान ने कहा—नागिन ! तुम अपने पति के पक्ष को अच्छी तरह पहचानती हो तभी तो सुबह से ही उस बड़े ठाकुर (सर्प) की बातें बांच रही हो ।६९।

यदि मैं सांप को बिना जोते खाली घर लौट जाऊं तो घर वाले सांप के चिह्न के बिना यहां आने की बात को ही नहीं मानेंगे। नागिन बोली—लाला ! तुम यह सत्य समझो कि—तुम्हारे माता पिता के पकवान उलट गए हैं एवं घुघरी मुक्ताओं में परिवर्तित हो गई ज्ञात होती है ।७०।

नंद के घर नौलाख दूध देने वाली गायें हैं अतः यह नाच-कूद तुम्हारी नहीं है, उस मक्खन का ही प्रताप है। तुम्हारी जिह्वा से जितने बोल [कुवचन] निकले हैं उनका हिसाब तो कालिय ही लेता पर वह अभी सो रहा है ।७१।

श्रीकृष्ण ने कहा—नागिन ! तू यह निश्चयात्मक रूप से समझ ले कि मेरे वचन जो निकल गए हैं वे हाथी के दांतों के समान हैं जो निकलने के पश्चात् कभी नहीं मुड़ते। तेने मेरे वचनों को व्यर्थ समझ रखा है, वास्तव में ऐसी बात नहीं है मैं जो एक बार कह देता हूं उसका इक्कीस बार तक पालन करता हूं ।७२।

---

६८ मोदिसो=मेरी तरफ। जेम=जिस तरह। छोड=त्याग। माडो=हठ। हेकार=हां। होड=प्रतिज्ञा करके। कोड=प्रेम तथा के लिए।'

६९ झाळ=छेड़खानी झूठ। तर=तब। जाम त्रीजे=तीसरे प्रहर। पक्ष=पक्ष। बांच=बांचती है।

७० रीतो=खाली। बाहुडु=लौटूं। जे=यदि। निसाणी=चिह्न। मणिपेण=कालियनाग। पाखे=बिना। ओथणो=उलटना। घूघरी=साबुत धान्य उबाल कर बनाया हुआ पकवान। साच=सत्य।

७१ दूझणी=दूध देने वाली। बोल=वचन। लेखो=हिसाब। फणपेण=सर्प।

७२ नेठाह=निश्चयात्मक। गैंदंत=हाथी के दांत। जाणे=मानो। वृथा=फिजूल। मूझ=मेरे। मुड़=फड़ता हूं। वार=दफा। पाळूं=पालन करता हूं, निभाता हूं।

अमा पथ खाडा तणी धार आग,
ऊस एह[1] मूक्या पछै छाट लाग ।
मोरे देग्र धाहोर च गाम[3] माहै,
ग्रत्री ऊमट कथका मग्ग वाहै[3] ॥७३॥

सत्री वद्दा[1] कस रैयत्त[2] सासी,
रहै[3] वट माथ वहै व्रज वासी ।
घर[4] वसरे तातरी टाट घुट्टी,
तदै ताहरी केथ यत्रयट[5] त्रुट्टी ॥७४॥

रळी[1] वसर राज प्रवेस रमता[2]
तद[3] नदर नेस[4] वलमद्र न हुता[5] ।
ह्यि[6] नागणा मो वलभद्र आगो,
मिळ वसरा दूत पाणी न माग ॥७५॥

जोवो[1] नद र ग्रेह[2] खनवट्ट[3] जागी,
ह्यि लागवा सक आलाक लागी ।
यहू नागणी सुण[4] तू रोप वान,
मिळ दादुरा मेह तो साच मान ॥७६॥

काळीनू[1] न नाथ तो थार[2] कमावू,
जसोदा माई[3] नद बाव न जावू ।
नही नागणी नाग[4] थागो निवार,
ह्यि एव ही[5] गाठि फेरू हजार ॥७७॥

---

७३ [1] घट [ग], घाट [ड], [2] बाजाव [ख ङ] [3] सत्री ऊम ही खाण को खाग वाहै [ङ] ।

७४ [1] काहै को [ङ] [2] रेहेत [ट] [3] विचेवा? [ड] [4] घर कसरेतुबसी तात [ख] टाटि [ग] घाठी [घ ङ] घरे कसरे तातरी टाट घाठी [च] [5] चित्रवट्ट [च] ।

७५ [1] रुले [ड] [2] पहुना [ख], पोता [ङ], [3] तदा [ङ] [4] नेन [ख] नेह [ङ] [5] नोता [ङ] [6] बहे [ग] भावे [ङ] ।

७६ [1] जुए [ग] जोया [ङ] [2] नेस [ख ग] [3] खत्रोट [ङ] [4] बोल रोप काने [ख ग] रूपपु बोल [ङ] ।

७७ [1] काळी नाग नाथून जो ए? मायो [ङ] [2] तुम्हारो कमायो [घ च] [3] प्रसू [ङ] [4] साग [ग घ ङ] [5] ह्रेकणी [ङ] ।

हमारा पथ (मार्ग) खांडे की धार पर है अर्थात् दुर्गम है। इस दुर्गम मार्ग का त्याग करने पर ही कोई कलंक लग सकता है। हमारे गांव के अहीर-क्षत्रिय हाथों में खड्ग धारण किए अभी से उमड़ रहे हैं। (कि—कालिय नाग को ह्रद से निकाल कर छोड़ेंगे) ।७३।

नागिन बोली—ब्रजवासी कब से क्षत्रिय बन गए हैं ? ऐसे तो कंस की बहुत रयत है जो अपने अपने हिस्सा पर चल रही है। ब्रजवासी भी हिस्सों पर चल रहे हैं अर्थात् कंस के अधीन रह रहे हैं। जब कंस के घर तुम्हारे पिता का सिर मूंडा गया था, तब तुम्हारी क्षत्रियता कहां चली गई थी? ।७४।

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—नागिन! जब कंस के राज्य में बहुत से लोगों ने मिल कर उपर्युक्त नाटक खेला था, तब नंद के घर बलभद्र के समान पुत्र उत्पन्न नहीं हुए थे। अब मेरे और बलभद्र के सम्मुख यदि कंस का दूत आ जाय तो वे पानी भी नहीं मांगते हैं अर्थात् हमारे द्वारा मार दिए जाते हैं ।७५।

नागिन ने अन्य सखियों की ओर संकेत करके कहा—देखो, देखो! नन्द के घर में क्षत्रियत्व जाग उठा है जिससे अब लोगों को भय होने लगा है! भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—नागिन तू क्या ताने दे रही है ? ध्यान लगाकर सुन, मेंढक तो वर्षा होने पर ही वर्षा को सत्य मानते हैं, वर्षा की बात को नहीं ।७६।

मैं यदि कालिय को अपने काबू में न कर सका तो 'आजीवन तुम्हारे यहां ही चाकरी करता रहूंगा' अपने माता-पिता के घर नहीं जाऊंगा। परन्तु नागिन! मेरे वार का निराकरण तुम्हारा कालिय नहीं कर सकेगा। मैं अभी उस सहस्र-फणधारी कालिय को इस एक गांठ की लकड़ी से घुमाऊंगा ।७७।

---

७३ अमां=हमारा। पथ=मार्ग। खांडा=तलवार। धार=नोक। पर्छ=धार पे। घाट=दाग। माहै=में अहर। उमट=उमड़ रहे हैं। कद्का=अभी क। बाहै=हाथों में।

७४ रयत=जनता। सग्गी=बहुत। बट=हिस्से। टाट=सिर। तदै=तब। कैथ=कहां। तूटी=छोड़ गई थी, टूट गई थी।

७५ रळी=मिलकर, प्रसन्नता। बेस=घर। हिव=अब। मो=मरे। पाणी न मांग (मु०)=मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

७६ जोवो=देखो। ग्रह=घर। रजवट्ट=क्षत्रित्व। सक=भय। रोप-कान=कानस्थिर करके, ध्यान पूर्वक। दादुरा=मेंढकों को। मेह=वर्षा। साच=सत्य।

७७ न=नहीं। साधु=वश में करू। चयाऊ=चाकरी करता रहूंगा। थारो=तुम्हारा। निवार=निवारण कर सकेगा। एक ही गांठि=एक ही गांठ वाली लकड़ी से। फेरू=घुमाऊंगा। हजार=सहस्र फन वाले, नाग को।

पवाडा अग्राहा पहेला[1] पुमावौ[2]
घडोए विऊ नीमड था जघावौ[3] ।
सती बाद पूजा नही साम तोल
बाल[4] वाढतो वार[5] पाघोर बोत ॥७८॥

सुण्यो[1] न ओगाणी[2] पुराणी मयाणी
रूहोज नही जगळा जाट[3], राणी ।
धाळी नागरी काण रागी न धाई,
वकैवाळ[4] न मुह मा चाढि वाई ॥७९॥

धुरा पोसियो[1] थान न धान घायो[2],
वळ मोपळो माळीय लाडवायो ।
अम्हा सामहो न मन्नो खिज्ज[3] आव,
किसू आपरो माल आप कराव ॥८०॥

पख नीहू पाढी, मानो सीप मोरी,
अर कूण लाज पखी[1], आव ओरी ।
नमो धीठ धोठा, नव नाग नारी,
हिव[3] जोडि तोमू वाता वाद हारी ॥८१॥

अढगा[1] घहो[2] बोल जेता अधाऐ,
पल्[3] तेतला आज तोनू पसाऐ ।
नरा नारी को नागणी ना वियाणी,
रही बाझडो देव दाणव राणी ॥८२॥

---

७८ [1] पहेली [ङ], [2] पवाये [ङ], [3] घडी रांध्यु निमडी भाजघाए [ख ग], घणाइ राम्रोयव मीवडइ मा जु घाए [घ], घणों कथियो नीमडे मेट घाए [ङ], [4] बधे [ङ], [5] कोइ [घ] ।

७९ [1] सुणीजे [ङ] [2] वम्वाणु [ख घ], ऊखाणी [ङ] [3] जट्ट [ङ], [4] नीमु हो न चाढाव्य बाई [ख घ], मुहो चढवेत बोदे [ङ] ।

८० [1] पोखियो [ङ], [2] घायो [ङ], [3] पूद [ख], वाद [ङ] परसो देखि [घ] ।

८१ [1] पख्यु [ख], पगे [घ], पखो [ङ], [2] धोट [ग], ढीठ [घ] उजपा [ग], जपी [घ], हवे [ङ] [3] भजे [ग] हवें [ङ] ।

८२ [1] घटका [ग], [2] कहा [ङ], [3] पलु तेवरा [ङ] ।

तुम अखाड़े के अन्दर आने से पहले ही अपने पति के युद्ध-चरित्र पर प्रसन्न हो रही हो। अभी इसी स्थान पर दो घड़ी में निर्णय हो जाएगा। एक अन्य नागिन ने पहली नागिन से कहा—सखी! श्याम के बराबर विवाद में हम नहीं पहुंच सकती हैं क्योंकि यह तो 'सीधा किनारा काटता हुआ' ही बोलता है।७८।

नागरानी! तुमने एक पुरानी लोकोक्ति नहीं सुनी है क्या—'जंगल में जाट को रोकना नहीं चाहिए'। इसने अपनी बकवास में कालिय नाग की कोई प्रतिष्ठा नहीं रखी। इसस मैं कहती हूं—बहिन! इस मूर्ख को 'अपने मुंह मत लगा'।७९।

प्रारंभ से ही हम लोगों ने इसे अनादि से पोषित करने और फिर महल के अन्दर दुलारने का प्रयत्न किया। इतना करने पर भी यह हमारे सम्मुख क्रोधित हो हो कर आता है तो 'हम भी अपना मोल अपने आप क्यों कराए।' अर्थात् इससे दूर रहना ही अच्छा है।८०।

तुम तीनों ही पक्षों (पीहर, ससुराल, ननिहाल) में चतुर हो अतः मेरा कहना मान कर इधर आ जाओ। इस कृष्ण के किस पक्षवाले लज्जित होंगे? अर्थात् इसके कोई पक्ष है ही नहीं। नागिन ने कृष्ण की ओर संकेत करके कहा—हे धृष्ट बालक, तुम्हें नमस्कार है! अब मैं तुझ से वाद विवाद में पराजित हुई, तू विजयी हुआ।८१।

तेरे पास जितने बेतुके वचन हैं उन्हें तृप्त होकर कहले, आज तुझे सब माफ हैं! क्योंकि—मानव, नाग, देव, दानव जाति की कोई भी स्त्री आज तक प्रसूता नहीं हुई है, सारी वन्ध्याएं हैं।८२।

---

७८ पुमावो=प्रसन्न होना। निमड़ै=निपटेगा। जयावो=स्थान पर। पूगो=पहुंचना। तोल=बराबरी में। वाढतो=काटता हुआ। धाधोर=सीधा स्पष्ट।

७९ ओखाणो=लोकोक्ति। न्हौ जै नहीं=रोकना नहीं। कांण=प्रतिष्ठा। काई=किसी भी तरह की। मां=मत।

८० पुरा=पहले। पान=स्थाणु, मूल। धान=पन्न। धायो=तृप्त किया। मोकळो=बहुत। खिजम=क्रोधित होकर। किसूं=क्यों, कैसे। मोल=कीमत। आप=स्वयं ही।

८१ प्रौढ़=चतुर, निपुण। येर=इसके। पखो=पक्ष वाला। याव-आवोरी=इधर आजा। धीठ=धृष्ठ। जोड़=जोड़कर। तोसूं=तेरे से। हारी=पराजित हुई।

८२ वखणा=व्यंग्य। धपाए=तृप्त होकर। कन=समीप में। जेतरा=जितने। बगसाए=क्षमा किए। वियाणी=प्रसूता हुई। बांझड़ी=वन्ध्या। राणी=रानियां।

नारी गाठियो मुठ दूजी[1] न सायो,
जणणी[2] किणी हेक तू ही जायो।
आयो नाग सू झूय लवा अतागो[3],
अडीलो हुयो आज पाछो न आगो[4] ॥८३॥

यडा भीच[1] भूपाळ केकाण वाळा[2],
सिवै[3] नागरी[4] याण वेवाण वाळा।
अहीराव न डावडो[5] एह आडा,
गिणा,[6] वाद जोता 'वेई[7] काढ गाडा' ॥८४॥

भुजगा तणी वात[1] यारँ भुजारी[2],
दोहा[3] अतरा[4] रात[5] छाटा[6] दुजारी।
मदा आणियो[7] नागणी तेण[8] मारो[9]
थयो[10] वेद[11] पाग[12] नवयु पण्ण[13] थारो ॥८५॥

अहीनारि सू नारि भासै[1] अनरी
अँरी[2] जोयो न देखी[3] चरो न हरी।
सुणो[4] नागणी आपणी हद्द माही,
नरा अस्मुरा अम्मरा गम्म नाही ॥८६॥

पवना न चदा न दुडदो[1] प्रवेसा
अठ एहरी गम्म एहाअ देसा[2]।
सुण[3] नाम पारब्रह्म विच्चार सू नी,
घोटा[4] रूप, मोरारि निवाण धूनी[5] ॥८७॥

---

८३ [1] बीबी [ख] [2] जनू नी तू ही हेक हेतीज जायो [ङ], [3] अताग [घ ङ], [4] माग [घ ङ]।

८४ [1] भेंच [ङ] [2] बुला [ख घ] बोल्या [ग] [3] सिवस [ग], सिव [घ] [4] सु केण [ग ङ] [5] डावडा [ङ] [6] घणो [ख], गिण [ग], गुणा [ङ] [7] वही [ङ]।

८५ [1] भात्य [ख], भाति [ग] भेट [ङ], [2] भुजारो [घ] [3] दिसी [ङ], [4] प्रांतम [ख] [5] राति [ग], राता [घ ङ], [6] छेनी [ख] [7] दुजारो [घ] [8] तेण्य [ख], बोल [ङ], [9] सार [ख ग], सार [घ], [10] थऊ [ग], [11] देव [च], [12] पासा [ख, ग] [13] एण [ग घ]।

८६ [1] भाखाई [घ] [2] हियारी न जोवे चखे चाई हेरी [ङ], अहोराण घड देव [घ] [3] जाइ सत्त [घ] [4] मुण [ङ], मुहद्द [घ]।

८७ [1] दडयो [ख], दुडयो [ग घ] दिणदो [च] [2] मनेरा [ङ], पयेश [घ], [3] सुण्य सारस नाहि व्यचार सुनी [ख] मुण रूप विचार एतेह सूनी [ङ] सुण्यो उर विचार को नहि [ग] [4] ढोटो [ङ], [5] नावाण्य [ख] निव्वाण [ङ] नेवाण [घ ग]।

किसी भी अन्य स्त्री ने सोंठ की गांठ नहीं खाई है। अर्थात् प्रसव नहीं किया है, इस संसार भर में किसी एक माता ने तुझे ही जन्म दिया है। जो तू कालिय नाग से युद्ध करने [illegible] हठपूर्वक निश्चय करके आगे बढ़ रहा है।८३।

तुम यह नहीं जानते हो कि—मेघ घटा के सदृश सैन्य वाले बड़े-बड़े खड्ग धारी राजा कालिय नाग की मर्यादा को मानते हैं। हे सखी! अहिराज कालिय एवं इस बालक को, परस्पर विवाद की दृष्टि से तुलना करें तो यह बालक कालिय से कई करोड़ गुणा अधिक है।८४।

नागिन ने कहा—कालिय नाग और तुम्हारे बाहुओं की तुलना की जाय तो दिन और रात तथा शूद्र और द्विजों के समान अंतर दिखाई देता है। भगवान कृष्ण बोले—हे नागिन! जो सदा से आ रहा है वही अच्छा है। तुम्हारा प्रण क्या वेद से विपरीत नहीं हुआ है? अर्थात् तुमने मेरे सनातन स्वरूप को नहीं पहचाना।८५।

नागिन से एक अन्य स्त्री ने कहा—अरी नागिन! सुनो—क्या तुम अपनी आंखों से निहार कर नहीं देख रही हो? ये अपनी सीमा के अंदर हैं। इनकी जानकारी मनुष्य, देव तथा दानव किसी को भी नहीं है।८६।

हे विचारशून्य! जहां सूर्य, चन्द्र एवं पवन का भी प्रवेश नहीं है, उन देशों में भी इनकी पहुंच है। इनके नाम स्मरण मात्र से (भवसागर) पार हो जाता है। ये बालस्वरूप में निर्वाण प्रदाता कृष्ण हैं।८७।

---

८३ जायो=प्रसव न किया। जूझ=युद्ध। अतागो=इतना आगे। अबोला=हठी। पाछानदागो=स्थिर।

८४ भींच=शूरवीर,योद्धा। केवाण=सैन्य अश्व। लिवै=सहते हैं,मानते हैं। कवाण=कृपाण। बाबड़ा=बालक। एह=यह। सारां=तुलना करें। केई कोड़ गाड़ो (गु॰)=अधिक। गिणा=मानते हैं। जोतां=देखते हुए।

८५ भुजगांतणी=भुजगों की। भुजारी=भुजाओं की। दीहा=दिन। अतरा=अंतर। रात=रात्रि। छोटां=शूद्रों। द्विजारी=उच्च वर्ग की। सना=परम्परागत। तठ=वहां। सारो=अच्छा है। थयो=हुआ। पण=प्रण।

८६ घनेरी=अन्य। भेवी=अरी। (स)। चख=आंखों से। हेरी=निहार कर। हद=सीमा। असुरां=दानवों की। अमरां=देवताओं को। गम=जानकारी, पहुंच।

८७ पवनो=पवन। चंदो=चंद्रमा। दुडगो=सूर्य। जठै=जहां। एहरी=इसकी। विचार सूनो=विचार शून्य। रूप=स्वरूप में। मोरारि=श्रीकृष्ण। निवाण थूनो=निर्वाण प्रदाता।

सहै[1] बोलीया वाल जेता मभाळी,
वात वचन दीए दोढवाळी[2] ।
त्रिलाकी[3] न ग्रासई नीहा औन[4] वूझ
सखो बाळ एन त्रिभुव्वन सूझ ॥८८॥
दिग्गाळे[1] किसू नागवाळा दिवाजा,
ग्रणो वात माका-चवी कोड[2] काजा ।
न मानत नारी मुरार्गे निरस्सो,
पढी[3] सामद्रगा[4] वरसै[5] परस्खो ॥८९॥
रामा[1] सारती है सगी घणा[2] रेखा,
ग्रह्माड[3] वाळी वळी ते विसेखा ।
सहस्सा त्रिसी सोळ अरै सयाणी
पचासा उभ[4] खट दा पट्टराणी ॥९०॥
इठ्ठामी[1] उभ सौ दस[2] वाधि आठ,
सखी देस बेटा त्रिख्या[3] त्रख साठ ।
जणणी[4] तणी जूण मा ए न जायो,
उतारेवा[5] ए भाम चो[6] भार आयो ॥९१॥
मजाणे[1] वाळ तू, चक्रचाल माधो
वळीराव जेहो ठळी एण वायो[2] ।
जितौ डावडी औ, वळो देवी जाण्यो[3]
ठगेवा[4] गयो आप, आपे ठगाण्यो[5] ॥९२॥

---

८८ [1] सब [ख ग] जेता बोलिया [ड] [2] हुढ [ड] [3]ता लोटे [ख ग], न लोटे [ड],[4] विन्छ्यो न [घ], विढ़वू न [ड] ।

८९ [1] दिसाव [ड] [2] काय [ग घ] कोय [ड], [3] पोढ़ [ख] पड [ड], [4] शाम दूजो [ड], [5] करस्सा [ड] ।

९० [1] रमा [ग ड], [2] घ म [ड], दू पू [घ], [3] ब्रह्मंड वाळा सहै कौण लेसा [ड] [4] प्रमिसित्र [ख], प्रभे चत्र [ड] ।

९१ [1] प्रमिसो [ख], प्रम्यामी [ड] [2] दरबार [ड] [3] लख [ड], [4] जतूनी तणी जाण मा एण जायो [ड], [5] हवा [ड] [6] का [ड], तणो [च] ।

९२ [1]प्रिया म०प१० [ड][2]साधा [ड] बाधा [घ],[3]जाति दाऊ के है गमो देव ताणू [ख] जिवया दावक सखो दव आणू [ग] जसोदा तणो नद ए देवजाणो [ड] , [4] छलेवा [ड], [5] छलाणो [ड] ।

हे सखी ! इन्होंने जितने वचन कहे उनको सुना ? प्रत्येक वचन में कितना चातुर्य था ! इनके भय से त्रिलोक त्रासित हैं ये (कालिय नाग से) क्या भयभीत होंगे ? इस बालक को तो तीनों भुवन प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं ।८८।

इनको तुम कालिय नाग का क्या शौर्य दिखा रही हो ! इनके युद्ध बल करोड़ों कार्यों का कथाओं में वर्णन है । यदि तुम नहीं मानती हो तो इनका हाथ पकड़कर सामुद्र शास्त्र के अनुसार हाथ की रेखाएं पढ़कर परीक्षा कर लो ।८९।

हे सखी ! इनके हाथ में लक्ष्मी जैसी स्त्री होने की रेखा है और ललाट पर जो वलि है वह एक विशेष प्रकार की है । इनके सोलह हजार स्त्रियों का उल्लेख है जिनमें १०८ पटरानियां होंगी ।९०।

हे सखी ! देखो, इनके बहुत से पुत्रों का उल्लेख है और यह अन्य लोगों की तरह माता के उदर से नहीं उत्पन्न हुए हैं । ये तो पृथ्वी का भार उतारने के लिए ही आये हैं ।९१।

इनको तुम बालक मत समझ लेना, ये चक्रधारी माधव हैं । बलि जैसे राजा को इन्होंने छल से बांध लिया था । जितना यह बालक दिखाई देता है वैसा ही स्वरूप बलि ने देखकर इनको पहचान लिया था । ये माधव वास्तव में तो बलि को ठगने गये थे, पर आप ठगे गये ।९२।

---

८८ सहू=सब । बोल=वचन । सभाळी=सुना । दोड=चातुर्य । ब्हां=भय । भी न=यह नहीं । बूक=डरे, भयभीत होता है । बाळ=बालक । त्रिभुवन=तीनों लोक । सूझ=दिखाई देते हैं ।

८९ किसुं=क्या । दिखावा=शौर्य । साका=युद्ध । कोड=करोड़ों । कामां=कार्यों की । न मानत=नहीं मानती हो । निरखो=देखो । करग=हाथ पकड़ कर । परखो=जांच करलो ।

९० रामा=लक्ष्मी । सारखी=तुल्य । धणए=स्त्री । सळी=रेखा । विशेखा=विशेष प्रकार का । सयाणी=चतुर स्त्रियां ।

९१ जणणी=माता । तणो=की । जू ण=योनि । मां=में । आयो=उत्पन्न हुआ । ए=यह । भारथी=पृथ्वी का ।

९२ म=नहीं । बाळ=बालक । चक्रचाळ=चक्र चलाने वाला । माधो=श्रीकृष्ण । जेहो=जैसे का । इनि=इनकर । एण=इसने । बांधो=बांध लिया । डावडो=बालक । यो=यह । थापे=स्वयं ।

वळी रावळी वणिओ[1] देगि वाई,
प्रतिहार मा[2] सिद्ध कर्त्तार पाई ।
सवैही[3] म्यी[4] ग्यान[5] राणी सुणायो,
अरूठो अतूठो भल काज आयो ॥९३॥

ऊभो मूरळी आप लीव अधूर,
मोरो जागगो साम वाय मरूर ।
विकस्मी हम्सी वण[1] ऊची नजाई,
सपत्ते पताळ मरग्गे सुणाई[2] ॥९४॥

वधाई वधाइ जसोदा वधाई,
करै मूरळी नाद ठाढो कन्हाई[1]
मथ नीर ओछो[2] जिही मच्छ माही
जसोदा किणी थाह जीस्यो न जाही ॥९५॥

वडा जोप सी जुव वाहै वडाई,
ग्रागाचार नारद्द सम्मेप गाई,
रही मूरळी घुम्म बाजी रसाळी,
वळी चेतना अजना[1] साथ वाळी ॥९६॥

लट्यो[1] साथ जाण अमीधार लीधो
कणी[2] वण नाद सजीवत्त[3] कीधो ।
विजोगे सजोगे वण[4] ऊची बजायो,
प्रभू आपरा[5] जाणि अम्रत पायो ॥९७॥

---

९३ [1] वळी रिग्यगाटुलनम दामवाई [ख], वळी राव सून्तुठत [ङ], वनि र विणदातिके देवनाई [च], [2] कातीर मैं रिद्ध [ग ङ], प्रति॰ार कर्त्तार मर्थ्थ पाई [च], [3] सवाणी [ख ग] सवाई [घ], समाखी [~], [4] ग्गा [ख घ च], जमू [ङ] [5] भाग [ग घ ङ च] ।

९४ [1] वेण न घो वजायो [ग ख ङ] [2] सुणायो [ख ग ङ] ।

९५ [1] का हा ढगाह [ख], [2] तो छातणु णो, णो [ख ग ङ] ।

९६ [1] रा [ङ] ।

९७ [1] लट्ठु [ग], लटो [घ च], लुटे [ङ], [2] किणो [ङ], [3] सजोवग्न [ङ], [4] वगैवण वायो [ख ग] वजे वैण वायो [ङ], [5] री [ङ] ।

देखो सहिन ! बलि इसका अपना सखा और द्वारपाल के स्थान पर भगवान को नियुक्त करके सिद्धि प्राप्त की। इस प्रकार समस्त हाल (पूर्वावतार चरित्र सम्बन्धी जानकारी) नागिन को सुनाया और यह बोली—प्रसन्न तथा अप्रसन्न, किसी भी तरह से ये हमारे मन के लिए ही आये हैं।९३।

भगवान मुरली अधरों पर रखे हुए खड़े हैं मेरा स्वामी कालिय, इनके मधुर वादन से जग जाएगा। भगवान ने प्रसन्न होकर हंसते हुए इतना उच्च बांसुरी वादन किया कि उसे सातों पाताल एवं स्वर्ग तक सुना दिया।९४।

मुरली की सरस ध्वनि को सुनकर ब्रजवासियों में चेतना का संचार हुआ गर्गाचार्य तथा नारद परमेश्वर से कहने लगे—बधाई ! बधाई ! भगवान कृष्ण मुरली नाद कर रहे हैं। जिस प्रकार थोड़े पानी को मगर मथता है उसी प्रकार ये यमुना के पानी को मथ रहे हैं। ये कृष्ण किसी से जीते जाने वाले नहीं, इनकी भुजाओं में सुयश है अतः कोई बड़ा युद्ध जीतेंगे। इस प्रकार संक्षेप में वर्णन किया।९५-९६।

व्याकुल होते हुए समूह को मानो अमृतधारा स्वरूप वेणुनाद करके जीवित कर दिया हो ! जो वियोगी स्वरों तथा संयोगी स्वरों द्वारा जब वेणु वादन किया है वह प्रभु ने हमें अपना समझ कर ही यह अमृत पान कराया है।९७।

---

९३ रावळो=अपना। प्रतिहार=द्वारपाल। सिद्ध=सिद्धि। कही=कहकर। सम्ठो=प्रसन्न। अनूठो=अप्रसन्न। भल=मनके। काज=काय।

९४ ऊभो=खड़ा। नीध=लिए हुए। अधूरें=अधरों पर। वाय=वादन से। मधूरें=मधुर। विकस्यो=प्रफुल्लित होकर। हसी=हंसते हुए। ऊंचो=तेज स्वर से। सपते पताळें=सातों पाताल में। सरगे=स्वर्ग में।

९५ डाढो=बड़ा। थाग्रो=कम। जिहो=जगे। मद=मगर मच्छ।

९६ जापसी=जीतेगा। बाहें=भुजाओं में। समाचार=समाचार। संक्षेप=थोड़े में। धुन=ध्वनि। रसाळी=मधुर। बळी=लौटी चेतना=स्मृति।

९७ भरयो=व्याकुल, भरा हुआ। जाणें=मानो। अमीधार=अमृत की धारा। जचो—तीव्रतर। आपरा=अपना।

जिसी सिघवी[1] गग काळो जगायो
उपाडै फणाकार द्रव्वार आयो ।
फणाकार झाटक्ते[2] पूछ फेरी,
घणो घातियो साकड साम घेरी ॥९८॥

घेर्यो नदरी घोट[1] अहिक्कोट अेहो
जळाबोळ[2] माहे[3] कळा छोळ जेहो ।
नोळी वाटत सामटी[4] झाट नाग्वी,
प्रभू[5] अग लागी सोई फूऊ पाखी ॥९९॥

गोपीनाथ रा हाथ आया गडूहूं,
अहि गारडी जाण छाट[1] उड्ड ।
अहीमूठ वाज जिहा[2] ना उपाड,
रमै गारड[3] जाणि काळी[4] रमाड ॥१००॥

जुडो[1] जाति टोळा मिळी नागजादी,
विढे[2] साप नै सामळो सूरवादी ।
उभ जूग जेथी फिर नीर ऊड
काळो नाग[3] नू आणियो[4] काहकुडै ॥१०१॥

पसारा उसारा[1] खरा पाइकारा,
सहै[2] नाग[3] सारा[4] नरा नाइकारा ।
मच मूठ मारा[5] झरै श्रोण झारा
फणारा घणारा करै फूत्रकारा ॥१०२॥

---

९८ [1] जिसे सिघव [ड] [2] को नाटक [ट] ।
९९ [1] ढोट [ट] [2] अळागोळ [ग], भळाबोळ [ड] [3] बाणै [ड], [4] सामठी [ख ग] सामूही [च], [5] पमू [ड] ।
१०० [1] छाटयो [ड] [2] न जेही [ड] [3] गारडो जेम [ड] [4] काळी [ड] ।
१०१ [1] जोई नाग टोली [ड], नाग टोळा [ख] जुडे नाग टोळे [ग] [2] वढ [ड], अभो जग्ग जेठो फिर नीर डडो [ख च] डै [ड], [3] सु [ड], [4] पाखिया [ट] ।
१०२ [1] पोसारा [ड], [2] सहि [ख] सहै [ड च] [3] लाग [ख ग च] [4] धारा [घ], लारां [ड च], [5] मर [ग ड] ।

उसी सिपु राग से कालिय को जगाया तभी भी भृकुटि बनाए, फणों के समूह को ऊंचा उठाए वह दरबार में आया। उसने फणों का प्रहार करते हुए अपनी पूंछ का चारों ओर घेरा देकर कृष्ण को संकट में डाल दिया।९८।

कालिय ने परकोट के समान अपने शरीर का घेरा देकर नन्दकुमार को घेर लिया। इसमें घिरे हुए श्रीकृष्ण बादलों के अन्दर चन्द्रमा की तरह दिखाई देते थे। कालिय ने डक डक शब्द करते हुए जोर का प्रहार किया। प्रभु के अंग पर वह पुष्प पांखुड़ी की तरह लगा।९९।

गोपीनाथ के दोनों हाथ कालिय की गर्दन के पीछे आए मानों गारुड़ी सांप को वश में करने के लिए उसे छांट रहा हो। कालिय की केवल कण्ठ ध्वनि ही बज रही थी वह जिह्वा नहीं उठा रहा था मानों कोई गारुड़ी खेल करता हुआ सांप को खिला रहा हो।१००।

जहां पर कालिय नाग तथा श्रीकृष्ण दोनों लड़ रहे थे वहां समस्त भांति की नागिनियां समूह बनाकर एकत्र हुईं। पश्चात् उस स्थान से कालिय को भगवान श्रीकृष्ण द्रह के गहरे पानी में ले आये।१०१।

नरनायक श्रीकृष्ण द्वारा किये गए तीक्ष्ण पदाघात को कालिय सहने लगा तथा मुष्टिका प्रहार से कालिय के मुंह द्वारा शोणित के फव्वारे चलने लगे और वह अपने सारे फणों से फूत्कार करने लगा।१०२।

---

९८ सिपवी=सिपु (मारू) राग। फुणाकार=फनों का। [illegible]= प्रहार करते हुए। फेरी=घुमाई। घातियो=डाल दिया। [illegible]= संकट में। घेरी=घेर कर।

वढे [1] डींगळा[2] पीगळा [3] रा अगारा,
अधीराज[4] मारा उव कीध आरा।
भाहारा[5] करारा ग्रमे हाथ मारा[6],
वोछो[7] गाव[8] धारा वहै वारवारा[9] ॥१०३॥

तिधारा [1] चोधारा जुडै [2] भवतारा,
पादूरा प्रहारा घवा[3] ढीचणारा।
घमूरा घसारा सहै साप[4] सारा,
पडे पाव, पाणा[5] मय मिण्णिधारा ॥१०४॥

प्रह्यौ[1] गू दळी[2] जेम काळी लगारा,
तम[3] आज[4] धारा भुजं[5] सेम भारा।
भ्रुजती धरा रा भ्रा धम आरा
निहस्म[6] नगारा सुरारा भवारा ॥१०५॥

काळी नाग न मान झूव[1] करारा,
।

काळी[2] नागरी नाथरी हरि[3] हथ्थे,
रह्या ठाठरी देखिवा देव रथ्थ[4] ॥१०६॥

जुडी[1] नाग[2] बाला पडी पाव[3] जाचा,
कर[4] सापरी, साकळी सूत्र काचा।
रहै दाढ फाट नियो[5] वा न रीसा
वदनै वहै श्रोण[6] पचास वीमा ॥१०७॥

---

१०३ [1] युदि [ख] वहा [ङ] [2] डिंगळा [ख], डगळ [घ], डेगळ [ङ] [3] फिगळा [ख घ] फींगळा [ङ] [4] अधारा फिगारा [ग ङ] [5] कहानिया [ग], कनोरा [ङ], [6] धारा [ङ] [7] वद्यी [ङ], [8] राव [ग] [9] वारि [घ]।

१०४ [1] नधारा [ङ] [2] अडे [ङ], [3] ठिका [ग] [4] वांव [ङ] [5] वाला [ङ] गहुर्दा नमारा गडी गुठणा रा [ख ग ङ ध पा]

१०५ [1] प्रहे [ङ], [2] गुदद [ग], गुदहि [घ], गुदळ [ङ], [3] थम [ख ङ घ] [4] घोम [ङ], [5] जेमो [घ ङ], [6] नहस्स [ङ]।

१०६ [1] झूम [ङ], [2] नाथो [ग], [3] नाम [ङ], रा ह [घ], [4] भर घुड घाडो चढै आड भाड, बहु हाथरी बाथ नु नाथ बीड [ङ] अ० पा०।

१०७ [1] जरै [ङ], वडे [ख], [2] हाथ [ग ङ] [3] माथ [ङ], पाम [ख ग] [4] पड़ो [ङ], [5] वडे नाग रीसे [ङ], [6] सोळ [ङ]।

श्रीकृष्ण की मार द्वारा उसने आर्तनाद किया तथा अंगारों के सदृश विगलमय एवं पिगलमय वचन कहने लगा । श्रीकृष्ण के प्रहारों को सहता हुआ कालिय जल धारा के अंदर छोटी नाव के समान तैर रहा था ।१०३।

भव तारक श्रीकृष्ण,कालिय के साथ तिरछे एवं सामने से भिडे तथा पैरों में पड़े हुए साप को हाथों से मथने लगे । साप, श्रीकृष्ण के द्वारा किए गये एड़ियों के, घुटनों के तथा मुक्कों के प्रहार सहन कर रहा था ।१०४।

श्रीकृष्ण की भुजाएं आज शेष के समान कालिय के भार को सहन कर रही हैं । उन्होंने कालिय को गू दळी (हरे प्याज के पत्ते) के समान उठा लिया । उस समय भार से पृथ्वी कंपायमान होने लगी । बड़े-बड़े स्तम्भ भी थिरकने लगे और देवताओं की विजय दुंदुभि बजने लगी ।१०५।

कालिय नाग और श्रीकृष्ण भिड रहे थे ।

"कालिय का सिर भगवान श्रीकृष्ण के हाथों में था । इसे देखने के लिए देवताओं के रथ ठहर गए ।१०६।

समस्त नागिनियां एकत्र होकर भगवान के पांवों में पड़ीं एवं साप की याचना करने लगीं । उनके हाथों में कच्चे सूत की भूंखलाएं थीं । भगवान कालिय नाग के दांत उखाड़ रहे थे अत वह विलाप तो करता था, परन्तु क्रोध नहीं कर रहा था । उसके हजार फणों से शोणित बह रहा था ।१०७।

---

१०३ धकारा=जलता हुआ कोयला । ववै=उसने । धारा=आर्तनाद । करारा=तीव्र । हाथ=प्रहार । सम=सहता है । बोडी=पोडी, छोटी । धारा=नदी, तरंग ।

१०४ तिधारा=टेढ़े, पार्श्व से । थोधारा=सामने से । भवतारा=भव तारक कृष्ण । पादूरा=पदतलों के । ढींचणारा=घुटनों के । धमू रायसारा=मुक्कों के प्रहार । पाणां=हाथों से । मिथ्यि धारा=मथ को ।

१०५ यह्यो=ग्रहण किया । गू दळी=हरे प्याज की कोंपल । ध्रुजतो=कम्पाय मान हुई । धरा=पृथ्वी । थर्के=डगमगे । निद्दसे=बज । सुरारा=देवताओं के ।

१०६ झूब=भिड़ना , मारना । कोपरी=सिर । ठाठरी=स्थिर । देव रथ्यं=देवताओं के रथ ।

१०७ साचा=याचना । दाड=दाढ़ा । काढ़ं=निकालने पर । रीसा=क्रोध । वदन्नं=मुख से । पचास बीसां=हजार ।

काळी नाग नै[1] जुद्ध मातौ किसन
जमूना वहो पर सिंदूर व्रन ।
कियो आप सू आप आळोच कान,
माराध ही सप घावसू औ न मान ॥१०८॥
वाहाल[1] वडाळ गोपाळ वडव्व,
जो यँ नागणी झाग नाख जडव्वै ।
अहीराव न हाव कोई न[2] सूझ्यौ,
इमो भीडियो सास[3] नासा अळूझ्यो ॥१०९॥
पयौ[1] मार पाण[2] भयौ[3] गात मग,[4]
प्रभू माडियौ रास माथ पनग[5] ।
तिसी तत वसो वजो ताल ताळो[6]
माडै पाव आणी दियौ व्रनमाळी ॥११०॥
काळौ[1] नाचियो ऊपरै नाग[2] काळो
वळ रभ नाटारभो अक्वाळी ।
डर नाग काळी झरै श्रोण डाच्या[3]
नमी नाच त नाथ नारद नाच्या[4] ॥१११॥
भलो नदकिसोर नारद भारा,
पनगा सिर नाचियो नदि[1] पाख ।
जप नाथ सू नागणी हाथ जोडी
तमा देव[2] मोटा अमा मत्त थोडी ॥११२॥

---

१०८ [1] नी [ड], [2] मरम्या पखि घाऊ सदू न मन [ख ष], मरम्यां साप घाव सूधो न मान [ग],रम साप वेघाव [ड] ।

१०९ [1] विहाल हुयाको [ड], [2] काहू न सूझ [ड] एकोन सूझ [ष], [3] ऐहेस नासे मथूझे [ड] ।

११० [1] पयौं [ड] पव्रु [ख],[2] प्राण [ड] [3] कियो [ड] [4] भागे [ड], [5] पनगे [ड], [6] तिसी तत ताती बजी ताल ताळी, मक्यो पांव आरंभियो वनमाळो । तताथ तताथ तताथे सतान, उर मतय प्रजय सुलमान । गिड्डयो गिड्डयो गिड्डयो क गाज, वाइ वासळी नाद बोकासु वाज ॥ [ड] प पा ।

१११ [1] काळो [ड ग] [2] नित्त [ग ड ष],[3] डाच [ग ड ष] [4] नमो नाथ तो नाच नारद नाच [ड] ।

११२ [1] नाथ पाख [ड] यह पद्यांश [ग] प्रति में नहीं है । [2] थयो दोस [ड] ।

जिस समय कृष्ण और कालिय युद्ध कर रहे थे उस समय यमुना लाल रंग से परिपूर्ण होकर बह रही थी। भगवान श्रीकृष्ण ने अपने आप मन्त्रणा की कि—यह कालिय प्रहारों से तो वश में होने वाला नहीं है, इसे तो मारने पर ही सफाया होगा।१०८।

देखो नागिन, उस बड़े भारी सर्पराज को भगवान कृष्ण ने अपने हाथों में उठा लिया है तथा उसे ऐसा पीड़ित कर रहे हैं कि—कालिय को कोई दाव पेच स्मरण नहीं हो रहा है और उसका श्वास मासा पुट में उलझ गया है एवं वह मुंह से फेन गिरा रहा है।१०९।

पैरों की मार के कारण कालिय का शरीर टूट कर गिर पड़ा तब भगवान ने उसके सिर पर नृत्य करना प्रारम्भ कर दिया। भगवान ने जब कालिय के सिर पर पाव रखा, उसी समय बांसुरी बजने लगी साथही चारों ओर से लय पूर्ण तालियां बजने लगीं।११०।

श्रीकृष्ण, कालिय नाग के सिर पर नाटक की अप्सरा के समान अपनी कटि को मोड़ कर मुद्रा बनाते हुए नृत्य करने लगे। जिसके कारण कालियनाग भयभीत हो रहा है तथा उसके मुंह से रक्तस्राव हो रहा है। इसी समय नृत्य करते हुए नारद ने आकर कहा— भगवान ! आपके नृत्य को नमस्कार है ।१११।

श्रीकृष्ण बहुत ही भले हैं, श्रीकृष्ण बहुत ही भले हैं ऐसा कहते हुए नारदजी भी भगवान के पास नृत्य करने लगे। भगवान श्रीकृष्ण से नागनियां हाथ जोड़कर कहने लगीं—हे देव ! आप बड़े हो और हम अल्प बुद्धि हैं ।११२।

---

१०८ म=और । जुद्ध माती=युद्धमचा । पूर=बहाव सम्पूर्ण । सिन्दूर वरन=लाल रंग की । आळोच=मन्त्रणा । खप=नष्ट होगा । घाव सू=प्रहारों से । भो=यह । मान=समझेगा, वश में होगा ।

१०९ वडाळ=बड़े । भाग=फेन । जडव=मुंह से । न=को । दाव=दांव, अवसर । सूझ्यो=दिखाई दिया । मोडियो=पीड़ित किया, कसा । भळूझ्यो=उलझ गया है ।

११० पयो=परोंकी । पांणे=से, हाथों को । गात=शरीर । रास=नृत्य । तिसी तत=उसी समय । मांड=मुहपत ।

१११ रंभ=अप्सरा । नटारभी=नाटककी । अकवाळी=कटि मोड़कर । [illegible]च्या=जबड़ों से । त=आपका ।

११२ भलो=अच्छे । पास=समीप में । तमां=तुम । अमां=हम । मत=बुद्धि ।

तुकारा[1] रेकारा जिकारा[2] तमासू,
आया आज ते माफ कीज अमासू ।
महा खम्मिया निध्धि[3] आदम मोटा,
खरो हेक तू हो बिया सत्र खोटा॥११३॥
जुडे[1] रूप तोनें[2] श्रणावृत्त जेहा,
कुहाडा भिणा ऊपरा मार[3] केहा ।
लोका ही विचाळ[4] प्रभू लीक[5] लाग
अहडा सुण्या मापरा[6] केथि आगे ॥११४॥
सामी[1] सेस महेस जे[2] ही न सूझ,
बुधी[3] हीण की रावळी गत्त[4] बूझ ।
ब्रह्माड इकीसा देसावी[5] विहाएँ
जसोदा सोई[6] राजन् पुत्र जाण ॥११५॥
पयो[1] ब्रम्मरा पास[2] हू पध्धरावे,
भज नद तोई तुना[3] पुन भाव ।
पडीछा मही छी प्रिया राज पायो[4]
प्रभू वेदना[5] हुव[6] साप[7] दिरावो ॥११६॥
देऊ[1] कत वगो हसे[2] वैण दीधो,
काळी नागरी नार उछाह कीधो ।
आगे नागणी भेट सामठ्ठी[3] आणे,
जदूनाथ लीजे जिक्रू[4] राज जाण ॥११७॥

---

११३ [1] तुकारे रेकारे [ड] [2] मुमाया [ग] [3] नद्ध सुवद [ड] ।

११४ [1] जड़ि [ख] जडो [ड], [2]तुना [ड] [3]माट [ख] मात [ग घ], मात्र [ड] [4] लुकाई वधाळ [ड] [5] लक [ड], [6] सासरा [ड] ।

११५ [1] सम्हो [ड] [2] आइ [ड] [3] वुदय [ख], वुरा [ड] [4] गात्र [घ] [5] दास [ख ग], दास्वी [घ] देखी [ड], ६ पजों [ड] ।

११६ [1] पिता [ड] [2] हो [ग ट] [3] तवो [ड] [4] पडोछापि निपाप्यऊ राज पाय [ख] पडो मापरो छापयो राज प य [ड] [5]वदना [ख ग], [6] होयसी [ख ग] [7] साप सरायो [ख] साख लरायो [ग घ], राज पायो [ड] ।

११७ [1] दिया [ग] दीयउ [घ], दियो [ड], [2] हवे [ड], [3] सामेटय [ख ग], सम्मेट [ड], [4] जको [ड] ।

हे यादव कुल श्रेष्ठ देव ! आप तो क्षमा के अथाह सागर हो। संसार में एक आप ही सत्य हो, अन्य तो सभी मिथ्या है। अतः हमारे द्वारा आपके लिए जो छोटे बड़े शब्द प्रयोग में आगए हों, उनको क्षमा करना।११३।

आपका स्वरूप तो तृणावत जैसे राक्षसों से भिड़ने का है, हमारे जैसे तुच्छ तृणों पर कुल्हाड़े का प्रहार कैसा ? तीनों लोकों में यह लकीर (लांछन) लगजाएगी। भगवान ! कहीं आगे (पहले) भी साँप की शिकार सुनी है ? ।११४।

हे स्वामी ! आपका वास्तविक स्वरूप तो शेष नाग तथा भगवान शिव के लिए भी अगम्य है फिर हम अल्प-बुद्धि आपकी गति को क्या समझ सकती हैं। प्रातःकाल में जब आपने इक्कीस ब्रह्माण्डों को दिखलाया था, फिर भी यशोदा जी तो आपको पुत्र ही समझतीं हैं।११५।

वृन्दावन के पास ही आप अपने चरणों को पधराते हैं फिर भी नंद तो आपको पुत्र भाव से ही देखते हैं। हे प्रभु ! आपके पाद-पद्मों की जानकारी इस कालियनाग को नहीं थी, तब यह आप से भिड़ा। अब हमें कष्ट हो रहा है। आप कृपा करके इस नाथ को हमें दे दीजिये।११६।

भगवान श्रीकृष्ण ने नागनियों को वचन दिया कि—"तुम्हारे पति को शीघ्र ही तुम्हें दे दूंगा।" यह सुनकर कालियनाग की स्त्रियों ने हर्ष प्रगट किया और भगवान श्रीकृष्ण के सामने बहुत सी भेंट लाकर रखीं तथा प्रार्थना करने लगीं कि—इनमें से जो चाहे भी आपको पसन्द हो वह ले लीजिए।११७।

---

११३ तुकारा-रकारा=तिरस्कार मय शब्द। जिकारा=सम्मानमय शब्द। माफ=क्षमा। खम्मिया निध्धि=क्षमा के समुद्र। जादम=यादव। खरो=सत्य। सब्ब=समस्त। खोटा=असत्य, नकली।

११४ जुड़=भिड़ने का। कुहाड़ा=कुठार। केहा=कैसा। अहेड़ा=शिकार। कधि=कहो भी। आग=पहले भी।

११५ सांमी=प्रभु। सूझ=दिखाई देता है। को=क्या। रावळो=आपको। बूझें=जान सकते हैं। राव नु=आपको।

११६ पगों=चरण। भजें=स्मरण करते हैं। भावें=भाव से। पड़ीख्या=परीक्षा। प्रिया=प्रिय को। राज=आपके। वेदना=कष्ट। दिरावो=देवो।

११७ वेगो=शीघ्र। वण=वचन। उछाह=उत्साह। भेट=भेंट। सामट्टो=बहुत। जिकू=जो भी।

सवारं[1] घणा आप आपे अरच्च,
चोव चदण चीत्र[2] नारी चरच्चे ।
अही नाथियो पोयणी नाळ आणी,
असवार हूवो आप अप्पलाणी ॥११८॥

वागा[1] झालिया व्रज्ज सेरी विचाळे,
वळ फेरियो आगण नद वाळे ।
झडी[2] देह[3] चिंता पडी, कस जप,
काळी मारिय[4] टार वेकाण कपे ॥११९॥

काळी नाग वाळीद्रहा हूत[1] काढे,
दियो वास दूरतर[2] तिको तूस[3] दाढ ।
महाकाळ काळी तण माण मोडी,[4]
जसोदा दिसी[5] आवियो पाण[6] जोडी ॥१२०॥

विढ[1] विज्जरी एह उच्छाह वाळी,
कहता अळूझं[2] ब्रह्मा कपाळी[3] ।
गोविंददासरं आसर गुण[4] गायो,
वाचता न पोंचे[5] बहू[6] सेस वायो ॥
समवाद काळी तणो मत्त[8] सार,
चवं दास दासानु सायो[9] चितारं[10] ॥१२१॥

---

११८ [1] ऊपारि [ख], सवार [ग घ] सवारे [ड] । [2] चोल नारी [ख], चीर [ग घ],चाढ [च],कासमीर [ड],काळी भांथियो कमळा भार कन्ने, पड्यो भाय पाताळ सू चाय पान । असवार काळी तणो, कान भायो, विविधि विधी व्रजनारी वधायो । भगवान सू गोप गोपाळ भेला, वडा चोब फोळी दुजा तेण वेला ॥ [ड ग घ ड च] प, पा ।

११९ [1] वागे [ड], [2] झडे [ग] झरी [ड], [3] द्रोह [ड], [4] कूढियो, थो [ग ड] ।

१२० [1]सहत्त [ड] [2] दूरे नहा [ख], दूरे जिता [ग], दूरातका [ड], [3] हूंत [ग] [4] मोडे [ड], [5] दसु [ग], मणी [ड] [6] हाथ [च] ।

१२१ [1] विठा [ख ग], मीठा [घ], थाई [ड], वाती, [च], [2] अमूक [ड], [3] कमाळो [ख] [4] जस्स [ड], [5] पूज [ड] [6]सवेस [ड], काळी नाग वाळो सवाद कान, पया पेट नाव पडे तास पाने । जाणे यो न जायो जमदून जाड, पुराण मढोरे कियो वूम पाडे । रासमे समय कह्यो स त मसे,ममवाव गाता प्रहे पार सले। [ड] घ पा भगवान त गोपाळ भेळा, वद वात पूज दुवा तेण वेळा । [ष] अ पा [7] समवाक्ष [ग] [8] एह सारो [ड], [9] साइयु [ख], साइयो [ग], साइयउ [घ], [10] चितारो [ड] ।

नागनियों ने अपने आपको सुसज्जित करके भगवान की अर्चना की और चोवा तथा चन्दन से चित्र बना कर उन्हें चित्रित किया। तत्पश्चात् भगवान ने कमल नाल मगवाकर कालियनाग के नाक में नकेल डालकर उसे अपने वश में किया। फिर बिना काठी के ही उसकी पीठ पर सवार हो गए ।११८।

भगवान ने कालिय को लगाम को पकड़े पकड़े उसे व्रज की गलियों में घुमाया। उसके बाद नंद के आंगन में लाकर फिराया जिससे उसकी वह चिंता मिट गई। कंस ने कहा—कालिय जैसे टट्टू को मारने से कौनसे केशव कांपते हैं? अर्थात् उस क्षुद्र जीव को मार कर कौनसा बड़ा कार्य कर दिया ।११९।

जिस तरह कालियनाग को काली-द्रह से निकालकर उसको बहुत ही दूर स्थान दिया। उसी तरह तेरे कालिय की दाढ़ वाला (विष) था उसे भी भगवान ने दूर किया। महाकाल स्वरूप कालिय का मान मर्दन करके भगवान श्रीकृष्ण अपने दोनों हाथों को जोड़े हुए माता यशोदाजी के सम्मुख आये ।१२०।

इस उत्साह-वर्द्धक व्रज की लड़ाई का वर्णन करते हुए ब्रह्मा तथा शिव भी उलझ जाते हैं। फिर भी मैंने श्री गोविन्ददासजी के सहारे से भगवान के गुण (चरित्र ग्रन्थ) का वर्णन किया है। जो कोई भी इसे पढ़ेगा उसे सांप की हवा (पवन) तक नहीं लगेगी। यह भगवान श्रीकृष्ण तथा कालिय का सम्वाद (वर्णन ग्रंथ) अपनी बुद्धि के अनुसार दासानुदास कवि सांया ने कहा है ।१२१।

---

११८ धाप=देती है, देकर। चोवा=एक सुगन्धित द्रव्य। चीत्र=चित्र। पोयणी नाळ=कमलनाल। अपलाणो=बिना काठी के।

११९ वागां=नगारों। सेरी=गली, मुहल्ला। विचाळ=मध्य। टार=टट्टू। केकांण कांपै (मु०)=घोड़े कांपते है।

१२० हुत= से। काढ=निकाल कर। वास=स्थान। दूरतरै=बहुत दूर। तिको=वह। तुझ=तेरे। दाढ=दाढों में, बहुत। मांण मोडे=मान मर्दन करके। दिसो=सम्मुख। पांण=हाथ।

१२१ भिड=लड़ाई। एह=यह। उच्छाह-वाळो=उत्साह वर्द्धक। भट्ठ्रके=उलझते है। कपाळी=शिव। आसर=आश्रय में। न पौंच=नहीं पहुँचेगा। मत सार=मत्यनुसार। चवै=कहता है। चितारै= कवि चिंतवन करता है।

।। कलस रो कवित्त ।।

सुणे पर्ण[1] ममवाद, नद नंदन अहिनारी।
समद्रा पार ससार, होहि गोपद[2]अणुहारी[3]।
अनत अनत आनद, सब वपु तास समावै।
भुगति जुगति[4] भडार, किसन मुगत्ताज कहाव।
रम्यो[5] नृत्य राधा-रमण, दुहुभुज करि काळीदमण।
ते स्रवण-सुणण अहि[6] रावतणा, मटण[7] काज आवागमण ।।१।।



कळस [1] सर्यु सण [ङ] [2] गोवि द [घ], द्रोपद [च],[3] मनुहारी [छ],
[4] मुगत्ति त [ख ग ङ] [5] रचियो परित [ड] [6] गहरा [छ],
[7] नमरा काजि [ख], नमण कान्हि [घ]।

कलस का कवित्त

नंद नंदन श्रीकृष्ण और नागनियों का यह सम्वाद (वर्णनपद) जो सुनेगा, कहेगा वह भव रूपी समुद्र को गोपद के समान तर कर पार हो जाएगा तथा उसके शरीर में अनन्तानन्द का समावेश होगा। भुक्ति, जुक्ति एवं मुक्ति के भंडार श्रीकृष्ण जो कहलाते हैं उन्हीं राधारमण ने अपनी दोनों भुजाओं द्वारा कालिय दमन-नृत्य किया। उसी नृत्य को आवागमन मिटाने लिए कहना तथा सुनना चाहिए। ●●●

[कलस] भणै=कहेगा। सगुडासी=समान। वपु=शरीर। तास=उसके। भुगति=भोग। जुगति=युक्ति। भंडार=कोष। मुगराज=भगवान एव मुक्त। रम्यो=खेला। राधारमण=श्रीकृष्ण। तै=वह, उसे। भवण सुणण=कहना तथा सुनना। मटण काज=मिटाने के लिए। आवागमन=आना जाना, जन्म मृत्यु।

राजस्थानी साहित्य में नागदमण प्रसग

गीत नागदमण रो चारठ मुरारिदास रो कहियो

सोहै याधियां जड़ूलो वड़ूलो वरग्गा किया
        उघूडलो मागरो जड़ूलो माग आज ।
अड़ूलो आगणे ऊमो रूड़ूलो सो रोस लियां,
        कानूड़ो कड़ूलो बोलै वड़ूलां के काज ॥१॥

धणी मिल मागणी सुमागणी सुहागणी सो,
        मूणी यू पूछणी मायो जायो कुणी मात ।
मैंसो फूणी सुणी कारण कुणी सू जमाणी आब
        सत्र मन हूणी जनो अने सणी घात ॥२॥

बोलियो आणद घन मद रो हू कहाऊ बेटो,
        घराऊ मुकद धेन जसोदारो चव ।
मोरी देवो गेंद काये जगावो नागेंद्र मोटी,
        छोडो फव रवगारी मारियांरा फव ॥३॥

हस सारी नाग नारी उचारी बिहारी हूत,
        सवारी पधारी वळे लेतो आजे सूक ।
घट थारो चेम असो जुहकारी वातां कर,
        फूणांधारी दीठो न छ आगकारी फूक ॥४॥

मांटी रोस काटो जसो आंटो आटो वाता मेळो,
        मडास उमाटो तेग घांटो न छ मोड ।
पेम मग घाटी जघा काटसो फुनारी कांटो,
        पीड सीर वाटो चाटी पाटो तणी पोड ॥५॥

नागणो रहायो नाद वादियो अघाये वाद,
ताजे वातां भूलायो लखायो ताग ।
पायो अमी आपरां वजायो असो राग प्रभु
काहूदे जगायो काळो नोळी आयो नाग ॥६॥
राळतो कराळ झाळ फूणा वाळां फूकारडा,
घाळा लाणो ठाला घर घावै असो घोट ।
सळवळां झोहां घणो गलाफा गुजाफां लाळा,
परनाळां पड जठो हळाहळा घोट ॥७॥
कर पूं रपट्टां रट्टा नपट्टा कपट्टा कीधा,
छूटा पट्टां घट्टवट्टां फिरतो [illegible]छाळ ।
दाप ले उलट्टां दळतो दपट्टां ग्रद्दळां,
कट्टां भट्टां फूटा करै काळो विकराळ ॥८॥
करां वी मूकियां मोच फारियो कयान्गो फूड,
नाठो नामजादो गायो बासळी रो नाद ।
मारो नागजादो जोयो महाजोगी मग्रवादी,
घनादी जुगादी आदी दादी सेले वाद ॥९॥
लाग नहीं फूक झाळ रुपेडा पपेडा लाग,
नेडा नेडा फुणा घणा ऊपरे मथोठ ।
राजवी अहेडा जांण पडां डाढा रोस रत्तो,
रमतो उरेडा हिय केडा मायो रोठ ॥१०॥
लडतो कळाप घर लाप लोप हुयो लोहां,
आप नाग पायो फुणा वाहतो प्रमाप ।
स्याम थाप वाहे जणा ऊपडे जो छाप जसी
सांपरो अन्तर नि्हू तापरो सताप ॥११॥
माधियो पोअेणनाळि वनमाळ घड नाच,
ताळी ताळी नूंत वाली होयतो नवक ।
ग्रपाडी वडाली ध्राप कदम्मा चहूना घाटी,
असा काळो कपाळो कोराळो मड अक ॥१२॥
घरस अनत फूल हरख्य नारद ब्रह्म
निरख्ख भरोसा झांघ वज्राळो भार ।
आनद असोवा मव घनो घनो जीत अख्य,
न लख्य अलख माया मोहिमां निरार ॥१३॥

रीतियां नागणी इतां नागेंदा दिवदा रीझ
नमो नदनन्दा नम नागदारी मार ।
छपीला बुडदा चदा तोमदा न जाणू छन्द,
मत साए री ! मपा मणदा 'मुरार' ॥१४॥

—श्री सोभाग्यसिंह शेखावत के सौजन्य से

***

अथ गीत पाडगती सुपन्नरा

घडी पडता डमंमें घट झांझियो ववव डाळ,
मोर पावे अथाग पडता थार मार ।
सेहू नाळ घ बर दरसा नगाडियां रोदों,
काळी नाग नागाडियो नदरे कवार ॥

फन ढोय थसमा कराळा माग भाळा फुणां,
ताळा व गुमाळा तू गुपाळा तोरवान ।
विरताळा सिपाळा अहाळा कोप चाळाबद,
जूटा बिहू काळान बि चाळा जोरवान ॥

कमर्णा करणा घाव शाव वहे अमृतकारा,
उठे मूतकारा बिसी फुवारा अमाव ।
जद हरी वप काळो सघणा जोडिया जक,
सप सप बिछोडिया नदर सुभाव ॥

महा भुजगेस नाथ समाथ लडियो माण,
लम ठोर भराय लडियो जत लम ।
दडियो जवड मोर वचाटां मिटाय वहे
रजे मिन्न फुणाटां मडियो माटारम ॥

धू धू फटां धुफटा धुफटा धू धू फटां धार,
ता धिना ता धिना धि ना ता धिना सुताळ ।
ता थेई ता थेई थेई थेई थेई ताता,
गता ल अहेस माया नदरो गवाळ ॥

रमां झमां रमा झमा रमा झमा झमा रमा,
ठमका हमका झकां रमकां ठमक।
पाडगती गीत राधा रजण पयपै प्रयो,
नाय घूं सजणा निमो संगीत नितक॥

—श्याम रिशनाजी
'रघुवर जस प्रकाश" से साभार

●●●

नागनाथन लीला

कांचन की रे बाळा गेंद बणी रे, कांचस देऊं घडाय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
रुप्या की रे बाळा गेंद बणी रे, सोना मᳵ देऊं मढाय।
मोहन थारो गेंद बणो रे॥
पयलीज जो दोटू बाळा दोटियो रे, गई ते दरवाजा मांय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
दूसरो जो दोटू बाळा दोटियो रे, गई ते सेरी मांय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
तीसरो जो दोटू बाळा दोटियो रे, गई ते बजार मांय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
चौथो दोटू बाळा दोटियो रे, गई ते गोया मांय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
पांचवों दोटू बाळा दोटियो रे गई ते जमुनारी पाळ।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
खेलत जो खेलत गेंद गिरा पडो रे गिरी ते जमनां रा मांय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
गेंद का छमचड बाळो कूदपो रे, म्हारो कान्हो कूदपो जमना पयरे।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
बाळा गुवाळा दौड़या आया रे आया ते जसोदा रा पास।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥
निकळ जसोदा माता मायर थो थारो कान्हो कूदपो जमना-मांय।
मोहन थारी गेंद बणी रे॥

रडतो ज कुदतो माता नीसरी रे आई ते जमना री पाळ ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥

× × ×

नाग सोव ऽ न नागण जाग ऽ,
जगाण नागेण थारा राग सऽ घड़ी हुई सेलो वाद ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥
को रे बाळा तू, मारग भूल्यो,
को रे बाळा थारी माता न दुख्यो, को घर खोटी नार ?
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥
आंगळी जो मोड़ि नाग जगावियो रे,
नाग अवधूत जाग्यो, मचो घमघोळ ,
बरसी अगनि का मोळ जे का मुख मऽ जवाळ,
जळ जमना री पाळ, खेले नदा नु बाळ,
नदा-नु बाळ माई—कला-नु काळ ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥

× ×

नाग नाथीन बाळो हुयो असवार रे
बोली ते नागण तब —
म्हारा हाथ चूड़ा की लाज राखो,
म लऽ जुग जुग दीओ अम्हात ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥
नाग नाथीन बाळो हुयो असवार रे,
आयो ते जमना री पाळ ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥
बाळ-गुवाळ्या दौड्या आया रे,
आया ते जसोदा रा पास ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥
निकळ जसोदा माता बायेर आी,
नाग नाथीन बाळो आयो थारा द्वार ।
मोहन थारी गेंद बणी रे ॥

मोतियन सीर थारो वाळो वधाओ,
धूप पिलाव काळ नाग।
मोहन थारी गेंद वणी रे॥

—डॉ० कृष्णलाल हंस
"निमाडी और उसका साहित्य" से साभार

नाग अभिमान मदन

●●●

सुण जो साजन अचरज नी कथा। ॥ ए चाकणी ॥
एक दिन जमुना हो जळ में परिसरे हरि रम सुविचार। च०।
गिंदुक उछळी न तव पडयो, काळिद्रह मझार ॥१॥
चतुर नर हरि रम रस रंग,
जी हो सुंदर रूप सुहामणा, लाना चत्तो नाग अनंग।
सुण जो साजन अचरज नी कथा॥
ते लेवा न हरी द्रहानर गया, सोधी लियो गयद। च०।
पिछ फिरतो तव पेखियो, आवास तेजनो कंद ॥२॥ च० सु० ॥
भितरे दीठी एक गवाक्षिका, कौतुक अधिको धाम। च०।
वेई फलांग माहि गया निरीक्षण कर काम ॥३॥ च० सु० ॥
भाग जातां पलंग पे झीलता, दस काळो नाग। च०।
सहस्त्र फणो सूतो निदमें मटीवर विसनो छाग ॥४॥ च० सु०॥
कर तिहां नागणी पताळनी नव नव भांत विनोद। च०।
पामी अचरज ताम हरिमणो, बोल वचन सरोद ॥५॥ च० सु० ॥
नागणी वाच—
कांई तू वाट वीसरियो रे बाला, कांई तू मारग भुलियो।
कांई ते तारो काळ पटियो जे इण मारग आवियो ॥६॥
जळ कमळ छांडि जाय रे वाला स्याम मोरो जाग से ॥आंकणी॥
कान वाच—
नहि ते वाट वीसरियो रे नागण नहि ते मारग भुलियो।
नहि ते मारो काळ पटियो हु एण मारग आवियो ॥७॥ जळ ॥
नागणी वाच—
किहां तुमारो बेसणो रे वाळा कुण तुमारो गाम रे।
कुण राय ना चलग चाल, सु छ तुमारो नाम रे ॥८॥ जळ० ॥
कान वाच—
मथुरा हमारो बेसणो रे नागण गोकुळ हमारो गामरे।
कंस रायना चलग चाल, मोवडीदो माहक नाम रे ॥९॥जळ०॥
मागण अगाडो तोरा नाग नें वटो कम ने विप्रासोयो।

इम राम थी जुवटे रमतां, नाह तुमारो हारीयो ॥१०॥ मळ० ॥
नागणी नाग प्रबोधन थाय—
चरण चोळी अग मोडो, नागणी ए नाहो जगावीयो ।
उठो न पळयत बंठा पाओ यालूडो हम घर आवीयो रे ॥११॥मळ०॥
उठ्यो हो महिधर विष भर लोचने, कोप करी ततकाल । च० ।
आयो हो सनमुख हरिन ऊपरे रोस भरयो विकराळ ॥१२॥च०सु०॥
नाथ्यो हो भाली मस्तक तणी परे, पाम्यो अधिको त्रास । च०।
ऊपर बैसी नी हय परे वाहियो, छोर फिरो हरी पास ॥१३॥च०सु०॥
पाम्यो हो नाग तजो अभीमान ने प्रणमें प्रभुना पाय । च०।
हु तुम पायक लायक साहीब, मेहेर करो महाराज ॥१४॥ च० स०॥
हिव हु सेवक थाजयो साहरो, न मजु अवर भूपाळ । च०।
लेई सतकार आयो हरी निज घरे, मिलीयो बाळ गोपाळ ॥१५॥च०सु०॥

—पं० श्री गुणसागर सूरि

"श्री हरिवंश चरित्र ढाळ सागर" से साभार

●●●

नागनाथण लीला

छोटो सो कन्हैयो काळीदह पर खेलण आयो रे ।
भोळो सो कन्हैयो काळीदह पर खेलण आयो रे ।
काहे को घट गेंद बणाई, काहे को डंडियो लायो रे ।
पुष्पन की बाळ गेंद बणाई, हरि चंदण को डंडियो लायो रे ।
खेलत गेंद पड़ी जमुना में, हरि काळीदह में धायो रे ।
काई थारो नांव किणां घर आयो, कोण नाम धरायो रे ।
मात जसोदा पिता नंदजी, कृष्ण नाम धरायो रे ।
कौण गांव सु आयो रे बाळा, काई रे कारण आयो रे ।
गोकळ नगरी सु आयो ओ नागण, नाग को नेतो लेवण आयो रे ।
नाग नाथ प्रभु बाहर आया, नगर तमास थायो रे ।
पुरुषोत्तम प्रभु की बळि जाऊं, नागनाथ घर आयो रे ।

—श्रीमती सुमनादेवी उपनाम 'पपली'
से साभार

●●●